बीसलदेवजी के मरण और असुर हो नर भक्षण करने की बात सुनकर सारंगदेवजी का अपनी रानी को रणथंभ भेजना और आप उन से युद्ध करने को तयार होना ॥

दूहा ॥ सुनिय बात तो तात तब। दीं पठई रिथंभ ॥
मंच वहि तिन तेग बल। जुद्ध जुरन आरंभ ॥
छं० ॥ ५१२ ॥ रू० ॥ २५६ ॥

सारंगदेवजी की रानी गवरी का चिंता करना ॥

दूहा ॥ उन गति मो गति इक्क होइ। कै अवगत्ति मिलंत ॥
हास मिटै दुष को सहै। इहय चित्त मो चिंत ॥
छं० ॥ ५१३ ॥ रू० ॥ २५७ ॥

सारंगदेवजी का सेना लेकर ढुंढा राक्षस से युद्ध करने को अजमेर पहुँचना ॥

दूहा ॥ एक सहस भरि सथ्थ करि। सबल सकर दिय फेरि ॥
दै निसान चहुवान चढि। पहुँचिय गढ अजमेर ॥
छं० ॥ ५१४ ॥ रू० ॥ २५८ ॥

सारंगदेवजी का तीन दिन कोट में रहना, वहां असुर का न मिलना और अजमेर की भ्रष्ट और भयानक दशा देखकर चिंता करना ॥

कवित्त ॥ अति उद्यान सब थान। भये गढ धाम भयानक ॥
दिष्ट देखि सारंग। दैव चिंते तब बानिक ॥
ताकै कुल उपनीय। तपनि हम कौ कुल षोयौ ॥
तात पुकारे नीर। भरे नैनह घन रोयौ ॥
दिन तीन रहत हुअ कोट मधि। असुर नयन दिष्यौ नहिय ॥
तब सुचित भए सारंग दे। पुरी बसाऔं इह कहिय ॥
छं० ॥ ५१५ ॥ रू० ॥ २५९ ॥

५६-५८ पाठान्तर-वत्त। हों। मो। रन। वंदि। बर। जुध ॥ २५६ ॥ इन। इक। हुव। कें। अवगति। चित ॥ २५७ ॥ भर। सथ। निसांन। चहुआंन। चहुवांन। पहुचिय ॥ २५८ ॥

२५९ पाठान्तर-उद्यांन। थांन। धांम। बांनिक। वाके। नेंनन। रहैत। वसावै। वसावैं। कहीय ॥

सारंगदेवजी और उनके पिता ढुंढा दानव का परस्पर युद्ध होकर सारंगदेवजी का मारा जाना ॥

कवित्त ॥ एका दसमी दिवस । प्रात दानव पुर आयौ ॥
सकल सेन लै सस्त्र । उठि लरिबे कौं धायौ ॥
वे बाहैं तरवारि । इहै मुष पकरि सु कह ॥
ज्यों बेली द्रुम सघन । देषि मरकट फल चुट्टै ॥
किय पिता पुत्त जुध सम असम । गिर सौ जनु सारँग गिर्यौ ॥
मन जानि असुर नर घुसि रहै । सब ढुंढा ढुंढन फिर्यौ ॥
छं० ॥ ५१६ ॥ रू० ॥ २६० ॥

२६० पाठान्तर-दशमी । सेंन । शस्त्र । उठि । कों । वाहे । ज्या । चुट्टैं । किय पिता जुध सम अरु असम । सो । सारंग ॥

पाठक महाशयो ! चंद की वर्णन की हुई बीसलदेवजी की यह दानव कथा आपको अद्भुत मालूम होगी और इस में कुछ संदेह भी नहीं है कि मनुष्य मरकर फिर दानव नहीं हो सकता और न ऐसे चरित्र कर सकता है कि जैसे चंद ने वर्णन किए हैं । देखो अद्भुत वही पदार्थ है कि जो स्वयम् तो अद्भुत हो और दूसरों को अद्भुत ही प्रतीत हो परंतु जो आप किंचित् सूक्ष्म विचार करें तो आप को ज्ञात होगा कि चंद ने जो कुछ कहा है वह सत्य है अर्थात् जो आप को अद्भुत मालूम होकर असत्य निश्चय होता है वह वास्तविक सत्य ही है । जब तक मैं जो कुछ अंत में आप को कहना चाहता हूं वह नहीं कहूंगा तब तक मेरा वहां तक का कहना भी आप को अद्भुत ही प्रतीत होगा और वह वास्तव में है भी ऐसा ही क्योंकि जब तक कोई ताला कि जिस का खुलना विचार करने से भी कठिन दीखता हो और वह ऐसी सरलता से खुल न जाय कि जैसे कि '**एक तिनके की ओट पहाड़**' तो वह निःसंदेह अद्भुत ही प्रतीत होगा खैर, अब आप चंद की इस कठिनता के ताले को इस कुंजी से खोलकर अद्भुत वस्तु को देखिये, कि जो कुछ वृत्त चंद ने बीसलदेवजी की दानव कथा में लिखे हैं, वे सब उनके जीवन समय में बरते थे अर्थात् वे वाजीकरण की औषधियों के खाने, कुकर्म्मों के करने और सांप के काटने से बहुत ही पागल हो गये थे और उन्होंने इस पागलपने में अपने इकलौते पुत्र सारंगदेवजी तक को अपने हाथ से मारडाला था और राज्य को नष्ट भ्रष्ट कर दिया था । इस वृत्तान्त को चंद ने अपनी काव्य शास्त्र संबन्धी विद्वत्ता दिखाने के लिये अद्भुत रस में लिखा है । अब आप इस प्रसंग को ध्यान देकर पढ़के समझ लेंगे कि महाकवि चंद ने ठीक अद्भुत रस दिखा दिया है । यह आप के ध्यान में होगा कि ग्रंथकर्त्ता ने पृष्ट २३ छंद ८३ रूपक ३९ में कि जो चंद की अनेक कठिनताओं के खोलने की कुंजिओं के गुच्छों में से एक बड़ा भारी गुच्छा है उस में कवि ने इस महाकाव्य को '**नवं रसं**' से नव रसों में लिखा कहा है कि अब यह हमारा काम है कि इस हिन्दी भाषा के महाभारत में से नवों रसों के प्रसंग खोज कर निकालें । भला जो हम इस अथवा

आना की मा का उसे कहना कि मनुष्यों को ढूंढ ढूंढ कर खाने से ढूंढा नाम पड़ा और उसने रम्य अजमेर को वेराम कर दिया ॥

दूहा ॥ ढूंढि ढूंढि षाये नरनि । तातैं ढूंढा नाम ॥
देवपुरी अजमेर पुर । रम्य करी वेराम * ॥
छं० ॥ ५१७ ॥ रू० ॥ २६१ ॥

आना का माता से कहना कि अभी जाकर मैं उसे मार आऊं ॥

दूहा ॥ मात सुनै तपसनि वचन । अरु दिय असिस पवारि ॥
अबहि जाय अजमेर गढ । अरि कौं आऊं मारि ॥
छं० ॥ ५१८ ॥ रू० ॥ २६२ ॥

गवरी का आना को अमंतन मंत कहकर शिक्षा करना ॥

दूहा ॥ गवरि अमंतन मंत कहि । रष्षसि तोहि कुमार ॥
अरि रष्षस भर नग्ग में । प्रजा राज संघार ॥
छं० ॥ ५१९ ॥ रू० ॥ २६३ ॥

कवित्त ॥ गवरि मात सिष्षवै । पुत्त आनल इहि सिष्षिय ॥
मानव सौं मानवह । भिरंत दानव न पिष्षिय ॥
बहुत काल बहि गए । भरे जंगल धर पूरन ॥
म्रगं मयंद पंडियहि । छंडि पंषिय पलि सूरन ॥
जं जीव तजि मातुल घरह । भंजन घट भंग न करहि ॥
उर धरनि और रष्षस कहत । आनिन रष्षस उर भरहि ॥
छं० ॥ ५२० ॥ रू० ॥ २६४ ॥

ऐसी अन्य कथाओं को जो आगे आवेंगी अद्भुत रस में लिखी हुई न मानें तो फिर आप विचार करें कि अद्भुत रस क्या होता है और उसका लेख कैसा होता है । मेरी सम्मति में तो चंद ने जहां जहां जो जो रस लिखा है वह ऐसा ही उत्तम लिखा है कि यदि हम उसको न भी मानें तथापि हमको लाचार होकर उसे वही संज्ञा देनी पड़ती है जैसे कि यहां हम अद्भुत रस में लिखी हुई यह दानव कथा न भी मानें तथापि हम को यही कहना पड़ेगा कि यह अद्भुत बात है कि मनुष्य मरकर दानव नहीं होता न ऐसे चरित्र कर सकता है ॥

* विराम से वेराम बना मालूम होता है ॥

२६१-६३ पाठान्तर-ढूंढ । षाए । तातैं । नांम । वे रांम ॥ २६१ ॥ दीय । असीस । अबैं । जाई । कूं । कों । आंऊं ॥ २६२ ॥ मत । करि । रषसि । अहिर रकस भर नगंम ॥ २६३ ॥

२६४ पाठान्तर-सिषवै । पुत्र । सिषिय । सों । मानव । दांनव । नह । पिषिय । म्रग । पंषि । पंषि जीवनहु तजि मातुल घरह । रषस । गहंत । आंनन । रष्यस । करहि ॥

दूहा ॥ उच्चरि मात समंत इह । जीवन मरन न सिद्ध ॥
दुहु विधि धर बासन करौ । आराधन कि विरुद्ध ॥
छं० ॥ ५२१ ॥ रू० ॥ २६५ ॥

पुत्त अमंत जु सिष्यौ । सिष्यौ उरह दहंत ॥
ढुंढौ नर ढुंढै भषन । तू सेवनह कहंत ॥
छं० ॥ ५२२ ॥ रू० ॥ २६६ ॥

आना का माता से कहना कि या तो मैं सिर समपूंगा या छत्र धारूंगा ॥

दूहा ॥ तब आनल ऐसी कहिय । मुहि सुभिझय यह बत्त ॥
कै सिर उनहि समप्पि हौं । कै सिर धरिहौं छत्त ॥*
छं० ॥ ५२३ ॥ रू० ॥ २६७ ॥

आना का माता से कहना कि सेवा ऐसी है कि जिस से सब कार्यसिद्धी होती है ॥

कवित्त ॥ सेव देव रंजियै । सेव रष्षस बसि सब्बह ॥
सेव सिंघ पत्तियै । सेव विष जरै न जस्सह ॥
सेव बैर भंजियै । सेव रच्च पति पाहन ॥
सेव दहै नह दहन । सेव बहु द्रव्य उपावन ॥
जिहिं सेव देव रष्षस धरहि । जियन मान तन जाइ नन ॥
आरूढ ढुंढ धावत भषन । नहि सु देव नहि दानवन ॥
छं० ॥ ५२४ ॥ रू० ॥ २६८ ॥

२६५-६६ उच्चरि । सु मंत्र । सिद्धि । दुहुं । बर । करो । करौं ॥ २६५ ॥ पुत । सिषियो । सिष्यौ । भवन ॥ २६६ ॥

* यह रूपक सं० १६४० और १७७० की पुस्तकों में नहीं है और जब तक वह किसी और प्राचीन लिखित पुस्तक में न मिले तब तक हम उसे प्रसन्नतापूर्वक क्षेपक संज्ञा नहीं प्रदान कर सकते ॥

२६७ पाठान्तर-सुभिय । बत । कें । उतहि । हो ॥

२६८ पाठान्तर-रंजीजे । न सेव सिंध पत्तियै । जलह । भंजीयै । रचै । सेवह नह दहन । द्रिव्य । जिहि । नह । सो नह ॥

आना की माता का तो उसे शत्रु न सेवने को कहना किन्तु उसका अजमेर जाना ॥

दूहा ॥ मात बरज्जत रत्त हुअ। सत्रु न सेव न सेव ॥
आइ अनल अजमेर बन। असुर निरष्षन भेव ॥
छं० ॥ ५२५ ॥ रू० ॥ २६९ ॥

ढूंढा दानव का अजमेर बन में बहुतदिनों तक मन्तु होकर रहना ॥

सो दानव अजमेर बन। रह्यौ दीह घन अंत ॥
सुन्न दिसानन जीव को। थिर थावर जग मंत * ॥
छं० ॥ ५२६ ॥ रू० ॥ २७० ॥

अजमेर की नष्ट भ्रष्ट दशा और आना का खड्ग लेकर प्रेत के पास जाना ॥

त्रोटक ॥ तहँ सिंघ न स्रग्ग न पंषि बनं। दिसि सून भई डर जीव घनं ॥
नह मातह मंत अमंत कियं। पिय की धरनी रह तंत लियं ॥ छं० ॥ ५२७ ॥
तहँ ठाम भयानक सोच तयं। तहं ठाम कला कल सोधि वयं ॥
तिहँ ठाम भरं नर नारि ननं। तिहँ ठाम न पंथिय पंथ कनं ॥ छं० ॥ ५२८ ॥
तिहँ ठाम गजं बर बाजि ननं। तिहँ ठाम न सिद्धय साथ कनं ॥
तिहँठाम नदारिद द्रव्य गनं। हिय मात न तात न मोह मनं ॥ छं० ॥ ५२९ ॥
लय षग्ग रमक्किय प्रेत दिसं। बर बीर सु मंडिय चित्त रसं ॥
अबिलंध करो सकरं बिपनं। रिपु थान सपंत सु भै न मनं ॥ छं० ॥ ५३० ॥
नर दिष्षि अचंभ कियौ सु हियं। कहि आज बिधं भल भष्य दियं ॥
क्रुध प्यास रु निंदय राज ननं। सु गयौ वर दानव ताप तनं ॥
छं० ॥ ५३१ ॥ रू० ॥ २७१ ॥

---

२६९ ७० पाठान्तर-बरजत। रत। आय। अंनल। निरषन ॥ २६९ ॥ सून। सु ष्षा। इथिर ॥ २७० ॥

* हिं० मंत=सं० मन्तु=राजा से बना है। यहां यह मंत्र का अपभ्रंश नहीं है ॥

२७१ पाठान्तर-तहां। तहं। मृग। डर। वनं। मंसु। पीयकी। तत। तत्ति। लीयं। तहां। तिहां। ठांम। भयांनक। तहां। ठांम। तिहां। ठांम। तिहां। ठांम। नमं। तिहां कक्क सु पंथि रु पंथि जनं। तिहां। ठांम। तिहां। ठांम। तिहां। ठांम। द्रव। ले। लग। रु। मुक्किय। अबिलंब। थांन। संपत। सपत्त। दिषि। कीयौ। कोई। कोई आज भलो इह भष दियं। बुध। न निद्रय। दानव ॥

आना का अपने मन में विचार कर कहना ॥

स्लोक ॥ मनसाधार्य पुंसा स्याद् । विधिश्चिंतति नान्यथा ॥
ब्रह्माज्ञा लंघनेनापि । स्वयंपूरकमाधवः ॥ छं० ॥ ५३२ ॥ रू० ॥ २७२ ॥

कवित्त ॥ सो पूरक माधव्व । जगत जानन अधिकारिय ॥
थावर जंगम दैन । कठिन चिंता न बिचारिय ॥
सरव भूत है जाम । मध्य हरि दैन भूगत्तिय ॥
किं कारन नर झुरे । देइ मन वंछित बत्तिय ॥
सा पुरस चित्त धरकै नही । धरक चित्त कायर करहि ॥
तिहि काज देषि दानव बलिय । बल बलिष्ट पुन उत्तरहि ।
छं० ॥ ५३३ ॥ रू० ॥ २७३ ॥

२७२ पाठान्तर-स्यात् । विधिचिंतति । ब्रह्माज्ञा । माधव ॥

हमारे पाठकों को ज्ञात होगा कि इस ग्रंथ को क्रित्रिम बना हुआ कहनेवालों ने ऐसा अत्यन्ताभाव का वचन भी कहा है कि इस महाकाव्य के बनानेवाले को अनुस्वार और विसर्ग तक का भी ज्ञान न था । परंतु हमने इसी ग्रंथ में और इसी आदि पर्व में इस रूपक के पहिले आए हुए संस्कृत भाषा के श्लोक आप की दृष्टि के आगे धरे हैं कि आप न्याय कर सकें और ऐसे श्लोक आगे इस ग्रंथ में बहुत आवेंगे क्योंकि हमने इस महाकाव्य को कई आवृत्ति करके पढ़ा है । वैसेही इस श्लोक को भी आप पढ़कर देखें कि पढ़ने में तो यह कैसा सरल है और अभिप्राय में कैसा विद्वानों के विचारने योग्य है । साधारण संस्कृत जाननेवाले से यह श्लोक लगना कठिन है अतएव हम उसका अन्वय नीचे संस्कृत भाषा में भी लिखते हैं-

अन्वयः ॥ पुंसा मनसा आधार्यं यत् स्यात् तत् स्वयंपूरक=माधवः, विधिः ब्रह्माज्ञालंघनेनापि चिन्तति अन्यथा न चिन्तति ॥

अर्थ । पुरुष करके मन से धार के जो काम हो सकता है उसको स्वयं पूरा करनेवाला परमेश्वर (विधि) दैव विधान वा कर्म ब्रह्मा की आज्ञा को उल्लंघन करके भी सोचता है अन्यथा अर्थात् उससे उलटा नहीं सोचता ॥

सारांश यह है कि उद्योग के अनुसार ही फल दैव भी देता है चाहे प्रारब्ध उससे उलटी भी हो । इससे केवल उद्योग की प्रधानता कही है ॥

हे पाठको ! क्या आप के अपक्षपात से विभूषित हृदय में यह दोष कुछ भी जब सकता है कि इस महाकाव्य का ग्रंथकर्त्ता चाहे कोई भी हो ऐसा निर्बोध था कि जिसको अनुस्वार और विसर्ग तक का बोध न था ?

२७३ पाठान्तर-सें । माधव । जांनन । अधिकारीय । देन । दैंन । विचारीय । सर्व । जांम । दैंन । देन । भुंगतिय । दैव । नहीं । तिहिं । दानव । उवरहि ॥

आना का दानव को कंदरा में देखना और उसके खड्ग मारने पर दानव का गाजना ॥

पद्धरी ॥ दिष्यौ सु बीर कंदला गेह । सैं पंच हथ्य ता हथ्य देह ॥
असि असी हथ्य झारहि झनंक। मन सहस पाइ तो डर पनंक॥ छं०॥ ५३४॥
अग्गोष्ट उड्ड ऊठिय भनंक । उठतै सु रोमनि सनंक ॥
बुल्यौ सु बैन निय सत्त मान। देषंत चष्य बालक विनान॥ छं० ॥ ५३५ ॥
अति सुषम वचन मधु मधुर कंत । दिष्यौ सु अंस राजन सुभंत ॥
जंभाइ बीर दसनं लहक्क । उठ्यौ सु रोम रोमह पहक्क ॥ छं० ॥ ५३६ ॥
उर चंपि षग्ग सिर नाइ राज । गह्वराथ इन्द्र दानव सु गाज ॥
छं० ॥ ५३७ ॥ रू० ॥ २७४ ॥

इस पर दानव का आना से उसके मा बाप आदि के नाम पूछना ॥

कवित्त ॥ भेद वचन तन षेद । सुतन पंडुर चढि आइय ॥
उष्ट धरहर कंपि । सुतन प्राक्रम जंभाइय ॥
धरन सु थिर मन लीन । जीव धर धर धर कांनिय ॥
कौन भाव कवि चंद । बखिय सात्वक रस भांनिय ॥
पुच्छनं सु बाल बुल्यौ बलिय । करि सु चिंत अतिंत चित ॥
को मात तात कहि नाम को । को साँई साधक सु मति ॥
छं० ॥ ५३८ ॥ रू० ॥ २७५ ॥ *

ढुंढ दानव का आना के सिर पर हाथ धर गल्ह पूछना ॥

दूहा ॥ खरग हथेली वाम पर । ढुंढै मेलि अनल्ह ॥
करुना करि सिर हथ्य धरि । पूछि विवर सब गल्ह ॥
छं० ॥ ५३९ ॥ रू० ॥ २७६ ॥ *

२७४ पाठान्तर–कंदरा । ग्रेह । हथ । हथ । हथ । पाय । टोडर । उठिय । रोमह । बैन । सत । मांनि । चपु । विनांन । सूषम । वाचन । करंति । राज राजन । जंभाय । हसनं । लहक । नाद । गहरा इंन्द्र द्रा दानव कि माज ॥

२७५ पाठान्तर–द्रुर द्रुर । कंप । प्राकंप । प्राक्रंम । धरा धर । कांनीय । कोन । भाद । भांनीय । पुछन । बुल्यो । चित । अत्यंत । चिंत । कुमति ॥

* इस के आगे के अर्थात् रूपक २७६ से २७८ तक सं० १६४० और १७७० की लिखित

गाथा ॥ असुर चयेली चंदं । विसतारं कही यह थवा ईसं ॥
मुकता फल परिमानं । ता मध्ये सोहीयं आना ॥
छं ॥ ५४० ॥ रू० ॥ २७७ ॥ *

आना का मन में चिंता करना कि जो ढूंढा मुझे निगलेगा तो मैं उसका पेट चीरकर निकलूंगा ॥

दूहा ॥ आंनें चिंतिय राम । जो मुहि ढूंढा निगलिहै ॥
इंद्र ब्रतासुर जेम । निकसौं उदर बिदारि षग ॥
छं० ॥ ५४१ ॥ रू० ॥ २७८ ॥ *

आना का उत्तर देना कि जिससे बीसलदेवजी का मन मैन होगया ॥

दूहा ॥ गवरि मात उर उद्धस्यौ । पित बीसल मन मैंन ॥
इत आवन मन तरसयौ । सुभ्र तन देषन नैंन ॥
छं० ॥ ५४२ ॥ रू० ॥ २७९ ॥

साटक ॥ किं दारिद्र सु दुष्ट कुष्ट तनयं । किं भूमि सत्रू हरं ॥
किं वनिता च वियोग दैव विपदा । निर्वासितं किं नरं ॥
किं जन मानस रुष्ट जुष्ट जुगता । किं आपितं सद्गुरं ॥
किं माता चित रंग भंग सरसं । आलिंगता सुंदरी ॥
छं० ॥ ५४३ ॥ रू० ॥ २८० ॥

पुस्तकों में नहीं हैं किन्तु इधर की लिखी पुस्तकों में मिलते हैं। जब तक इन से भी पुरानी पुस्तकों में ये रूपक न मिलें तब तक उनको हम क्षेपक कहना योग्य नहीं समझते हैं ॥

२७६ पाठान्तर–करग । कर । गह । घेली । मेद्धि । अनल्ल । हय ॥

२७८ पाठान्तर–ढुंठा । निकसों । बिहारी ॥

† यह आज कल सोरठा छंद कहलाता है किन्तु प्राचीन समय में हिन्दी भाषा के कवि इसको दोहा भी कहते थे क्योंकि दोहे के जितने भेद भाषा के छंद ग्रंथों में लिखे हैं उन में सोरठा भी है अतएव चंद का यह दूहा संज्ञा देना कुछ आश्चर्यदायक नहीं है ॥

२७९ पाठान्तर–वल । मंन । आवनम । तुम । नैंन ॥

२८०* पाठान्तर–सत्रु । दैवपिवपदा । निर्वासितं । मांनस । जुगता । जगता । सतगुरं सरसा । आलिंगिता ॥

यह भी ध्यान में रहने योग्य बात है कि पुरानी हिन्दी भाषा की लिखित पुस्तकों में मृत और नृप जैसे शब्द म्रित और न्रिप लिखे देखने में आते हैं ॥

साटक ॥ नो दारिद्र न कुष्ट दुष्टन तनं । सचू धरा नो घरं ॥
नो वनिता च वियोग दैव विपदा । निर्वासितो नो नरं ॥
नो सन्मानस रुष्ट जुष्ट जगता । नो आपिता सत् गुरं ॥
मातुर्नाम्रित रंग भंग सरसा । ना लिंगिता सुंदरी ॥
छं० ॥ ५४४ ॥ रू० ॥ २८१ ॥

दूहा ॥ ना दारिद्र न कुष्ट तन । ना मुगधा रस भेव ॥
नानुरत्त संसार सुष । तो पग रत्तो सेव ॥ छं० ॥ ५४५ ॥ रू० ॥ २८२ ॥

साटक ॥ नैवां दुष्ष न सुष्ष साहस रने । नैवांन कालं क्षतं ॥
नैवां मात पिता न चैव धनयं । नैवांन किती रतं ॥
नैवांनं च्चित्त मित्त साजन रसं । नैवांन किं रुष्टयं ॥
त्वं देवं तुअ सेव देव मरनं । तोयं जयं राजयं ॥
छं० ॥ ५४६ ॥ रू० ॥ २८३ ॥

दूहा ॥ तब लगि कुष्ट दरिद्र तन । तब लगि लघु मुचि गात ॥
जब लगि हैां आयौ नहीं । तो पाइन सेवात ॥
छं० ॥ ५४७ ॥ रू० ॥ २८४ ॥

दानव का आना से पूछना कि तू क्यों राज अरत्त है ॥

दूहा ॥ आलिंगन दै हथ्थ धरि । अरु पुच्छिय दूह बत्त ॥
जा जीवन रत्तौ जगत । तू क्यौं राज अरत्त ॥
छं० ॥ ५४८ ॥ रू० ॥ २८५ ॥

आना का बीसलदेवजी दानव को उत्तर दे कहना ॥

दूहा ॥ जिय न रत्त नह धन दुष । भूमि न घर मुझ देव ॥
तिन उचाट निउँ कै मरौं । तुम पय रत्तौ सेव ॥
छं० ॥ ५४९ ॥ रू० ॥ २८६ ॥

---

२८१ पाठान्तर-नां । धरा नं । नां । विनता । नां । ना । ता । सन्मांनस । आपितो । गुरुं । मातुर्नाम्रित ॥

२८२ पाठान्तर-न । न मुगद्ध । नानुरत । नरतु । तूअ पग रतो सेव ॥

२८३ पाठान्तर-दुष । सुष । रस । पितं । मित । सज्जन । तुं । तुय ॥

२८४-८५ पाठान्तर-नब । हूं । नहीं । तो ॥ २८४ ॥ दे । हथ । पुछिय । रतो । सो तू केम अरत्ति ॥ २८५ ॥

२८६ पाठान्तर-रत । तहि । भूंमिन । तिहिं । जीऊं । जिउं । कि । मरों । पैं । रत्तो ॥

दूहा ॥ राजा ज दिन बुलाइ हौ । मुह सुभ्भै इह मत्त ॥
कै सिर तुम हि समप्पि हौं । कै सिर धरि हौं छत्त ॥
छं० ॥ ५५० ॥ रू० ॥ २८७ ॥

इह धरनी मुभ्भ पित प्रपित । आदि अनादि सु देव ॥
सो मंगन तुम पाय हौं । आयौ आतुर सेव ॥
छं० ॥ ५५१ ॥ रू० ॥ २८८ ॥

ढूंढा दानव का प्रसन्न होकर आना को अजमेर का राज देना ॥

चोटक ॥ सु प्रसन्नह देविन ईत ततं । नर रूप धरन्न कियौ सु मनं ॥
तुअ पुचह पौच बुधू उरनं । जन मानस राज करौं धरनं ॥ छं० ॥ ५५२ ॥
असि हथ्थ लियै असमान गयौ । पग टोडर कंदन ही जु ठयौ ।
तब पुज्जन कौं रविवार कह्यौ । चहुआन सु आनल राज दयौ ॥
छं० ॥ ५५३ ॥ रू० ॥ २८९ ॥

ढूंढा का आना को राज देकर गंगा की ओर उड़कर जाना ॥

दूहा ॥ दयौ राज आनल्ल गढ । उडि ढुंढा पह मग्ग ॥
दिसि गंगा तब गमन किय । उत्रर चिषा अति लग्ग ॥
छं० ॥ ५५४ ॥ रू० ॥ २९० ॥

ढूंढा का नेमऋषि के उपदेश से गंगा की ओरं जाते हुए दिल्ली पहुंचना ॥

पद्धरी ॥ नव द्वार रुक्कि नप पवन जोर । आयौ सु नेम रिष तथ्थ ठौर ॥
दिषि रिष्ष लग्गि निसचर सु पाय । कहि रिष्ष कवन तो काय ॥ छं० ॥ ५५५ ॥
बीसलह राज कथि पुब्ब कथ्थ । जरौं ताप उधरौं केम नथ्थ ॥
तुअ षिचि कौंन इह ठांउ धारि । कासी सु जाइ लै तिथ्थ धार ॥ छं० ५५६ ॥
तें पाप कीन आनन्त मर्म । तिहि ठौर सब्ब कुट्टै सु कर्म ॥
सुनि श्रवन उड्यौ राषिस अकास । आयौ सु पंथ क्रमि दिल्ली वास ॥ छं० ॥ ५५७ ॥

२८७-८८ पाटान्तर-जा । दिंन । मुहि । सूभै । मसि । कें । हों । कें । हूं । हों । छत्र ॥ २८७ ॥ प्रमित । हों ॥ २८८ ॥

२८९ पाठान्तर-प्रसंन्नह । धरंन । कीयौ । मांनस । करैं । हथ । असमांन । कूं । पूजन । कों । चहुआंन । चहुवांन । आंनल ॥

२९० पाठान्तर-दीयो । आनलहुं । कीय ॥

सुर थान निगम बोधह सुरंग। जल जमन आइ राषिस स्नमंग॥
कालिन्द्र दह सु अति गहर वारि। पावन्न परम सीतल सु चारि॥
छं० ॥ ५५८ ॥ रू० ॥ २९१ ॥

ढूंढा का हारिफ ऋषि से मिलना, अपनी पूर्व कथा कहना और तीन सैा अस्सी वर्ष महातप करके ऋषि से उपदेश ग्रहण करना ॥

कवित्त ॥ सीतल वारि सु चंग। तहां गय चल्लि निसाचर॥
लगि पिपास स्नम अंग। वारि पिन्नौ अँदोलि वर॥
भो सीतल सब अंग। करै अति वारि विहारह॥
रिष हारिफ गुह बगै। सोर सुनि आय निहारह॥
दिषि प्रबल रिष्षि पूछ्यै प्रसन। कवन रूप क्रीजै सु जल॥
निसि मद्धि अह राषिस वचहि। पाइ परस पुव्वह सकल॥
छं० ॥ ५५९ ॥ रू० ॥ २९२ ॥

दूहा॥ ढिंग जुग्गिनिपुर सरित तट। अचवन उदक सु आय॥
तहं इक तापस तप तपत। बीती ब्रह्म लगाय॥
छं० ॥ ५६० ॥ रू० ॥ २९३ ॥

कवित्त॥ तासो षु ल्लिय ब्रह्म। दिष्षि इक असुर अदभ्भुत॥
दिग्घ देह चष सीस। मुष्य करुना जस जप्पत॥
तिन रिषि पूछिय ताहि। कवन कारन इत अंगम॥
कहन थान तुम नाम। कवन दिसि करिब सु जंगम॥

२९१ पाठान्तर-नेंम। तथ। ठार। रिष। लागि। पाइ। रिषि। बीसलह कथ कथि राज कथ। जोरें। उद्धरें। नथ। तुव। कोंन। इहि। ठाउ। जाउं। ल्यैा। तिथ। आनंत। आनत। अधम्म। तिहिं। ठोरि। सब। ति। क्रम्म। उझ्यो। दिलि। सुरँ सुर। थांन। आय। राषिस्रमंग कालिंद। पावन। परंम। सू सारि॥
२९२ पाठान्तर-तिहां। चलि। सु निसाचर। श्रम। पीनो। अंदोलि। ठाय। सव्व। देह। करैं। रिषि। पुछ्यौ। क्रीलो। मद्ध। चवहि। पाय परसि गध अप्प सकल॥
२९३ पाठान्तर-तहां। आइ। लगाई। लगाइ॥
२९४ पाठान्तर-षोलिय। ब्रंह्म। दिषि। अदभुत। दिग्घ। चषु। रस जंपत। पुछिय। थांन। नांम। करीय। नांम। नृपति। आप। लभीय दहत। तजन। क्रत॥

सो नाम ढुंढ बोसल न्रपति। साप देह लभ्भिय दयत॥
कुहन सु तेह गंगा दरस। तजन देह जन मंत हत॥

छं० ॥ ५६१ ॥ रू० ॥ २९४ ॥

दूहा॥ तजन देह जन मंत क्रत। सजन अजैपुर राज॥
निय तन ऋषि वर षंडि हैां॥ मधि गंगा रिषराज॥

छं० ॥ ५६२ ॥ रू० ॥ २९५ ॥

तन सु पाप तापह तपन। किम उधार सो होइ॥
तुम रिषिराज वषिष्ट वर। सो उपदेसह सोइ॥

छं० ॥ ५६३ ॥ रू० ॥ २९६ ॥

तब मुनि वर हसि यैां कहिय। बिन तप लहिय न राज॥
अन धन सुत दारा मुदित। लहैा सबै सुष साज॥

छं० ॥ ५६४ ॥ रू० ॥ २९७ ॥

तब सु तहां उपदेस लिय। लगि धारन हरि ध्यान॥
तपत तप्प नित रिषि गुहा। अंग उप्पज्यैा ग्यान॥

छं० ॥ ५६५ ॥ रू० ॥ २९८ ॥

रिष सु उट्ठि तीरथ गयैा। हरी सु दानव छंडि॥
जैा लैां आऊं तिथ्थ करि। तैा लैां तू तप मंडि॥

छं० ॥ ५६६ ॥ रू० ॥ २९९ ॥

गाथा॥ तपत निसा र तप्पं। बीते बरष तीन से असीयं॥
भय वाधा त्रिण अंगं। लग्गैा राम धारना ध्यानं॥

छं० ॥ ५६७ ॥ रू० ॥ ३०० ॥

दूहा॥ ढुंढा रिषि उपदेस लिय। तिहि ढिग दरिय उधोर॥
वरष तीन सत असिअ लगि। महा प्रबल तप घोर॥

छं० ॥ ५६८ ॥ रू० ॥ ३०१ ॥

२९५-९९ पाठान्तर-क्रत। हो। होां॥ २९५॥ सोह। सोइ॥ २९६॥ यो। लहैां। सवैं॥ २९७॥ उहां ध्यांन। तप तप्पे। अंग अंग उपज्यो ग्यांन। अंग उपज्यैा ग्यांन॥ २९८॥ ऊठि। दांनव। लों। अऊं। तिथ तूं॥ २९९॥

३००. पाठान्तर-सनिचर। तापं। सं। भो। वाइक्र सब अंगं। लगों। ध्यान॥

३०१ पाठान्तर-तिहिं। गदरीय। वरष तीन से असीय लगि। अस अगल॥

अनंगपाल राजा का दिल्ली बसाना ॥

दूहा ॥ पंडव बंस अनंग न्नप। पति हथिनापुर ठाम ॥
एक समै जमुना तटह। बसिय राज तहं गाम ॥
छं० ॥ ५६९ ॥ रू० ॥ ३०२ ॥

अनँग पाल्ल तूंअर तहां। दिल्ली बसाई आनि ॥
राज प्रजा नर नारि सब। बसे सकल्ल मन मानि ॥
छं० ॥ ५७० ॥ रू० ॥ ३०३ ॥

अनंगपाल की सुता का निगमबोध कालिंद्री तट पर गौरी पूजने जाना ॥

कवित्त ॥ अनंग पाल तूंअर। नरिंद धरमाधि राइ गुर ॥
सुता तास अति सुभग। बरष अट्ठह स्रूप बर ॥
सषी सु आनि समानि। सील गुन वर अट्ठह तर ॥
सावन भावन मास। गवरि नित करै पुज्ज उर ॥
निगम-बोध कालिंदि तट। गई सकल पूजन गवरि ॥
तिहि काल मेघ अब्बह प्रबल। * भई लग्गि भींजन कुँअरि ॥
छं० ॥ ५७१ ॥ रू० ॥ ३०४ ॥

अनंगपाल की सुता का ढूंढा को पूजना और उसका कारण पूछना ॥

कवित्त ॥ अनगपाल न्टप सुता। संग पुत्री ति पंच सित ॥
प्रोहित पुत्री एक। पुच्छि सा चंडि सेव हित ॥
सब मिल्लि जमना तीर। गई अस्नान सबारिय ॥
दिषि देवल स्रत पिंड। तेह ढूंढा तप धारिय ॥

३०२-३ पाठान्तर-ठांम। यमुना। तहां। गांम। तोअर। दिल्लि। आनि। प्रज। बसे सकल तहां आंनि। मांनि ॥

* भई लग्गि भींजन-यह प्राचीन हिन्दी का वागरीति अर्थात् मुहावरा है ॥

३०४ पाठान्तर-तूबर। राय। अठह। सषी आनि समांग। आंनि। समांनि। सील। अठोतर। सावन। स पुज वर। निगबोध। कालिंदि। गइ। बर्रास। लगि। भीजन। कुवरि ॥

३०५ पाठान्तर-अनगपाल पुत्री सु एक। सथ साथिणी पंचच सत। पंच सत। ता मइ। मंहि। जमुना। वपु स्नान। मृत। तिहि। ढुढा। धारीय। पूजा। करीय। इय। दैत। पूज्यौ। तिनहि ॥

सब मिलि सु नारि पुज्जा करिय। बरष पंच दुअ मास दिन ॥
दिन अवधि दइत पूछिय तिनह। को तुम कारन काम किन ॥
छं० ॥ ५७२ ॥ रू० ॥ ३०५ ॥

अनंगपाल की सुता का ढूंढा को वर चाहने को पूजने का कहना ॥

गाहा ॥ इह सुनि अनंग नरिंदं। पुत्री मित पंच अवर दुअ राजं ॥
बर चाहत तुम पासं। ए बर बीर वास इक ठामं ॥
छं० ॥ ५७३ ॥ रू० ॥ ३०६ ॥

ढूंढा का राज-त्रियों की सेवा से संतुष्ट होना ॥

दूहा ॥ दिल्ली ढिग गहरिय गुफा। ढूंढा तहां बयट्ठ ॥
अट्ठोत्तर सौ राज त्रिय। सेवा करत सु तुट्ठ ॥ छं० ॥ ५७४ ॥ रू० ॥ ३०७ ॥

ढूंढा का वर देकर काशी को उड़ जाना ॥

पद्धरी ॥ दिय बाच बाल दानव सु राज। सज्ज्यौ सु अप्प बर बचनं साज ॥
उडि चल्यौ अप्प कासी समग्ग। आयौ सु गंग तट कज्ज जग्ग ॥ ५७५ ॥
सत अट्ठ षंड करि अंग अग्गि। होमे सु अप्प बर मद्धि हव्वि ॥
मंगौ सु ईस पहि वर पसाय। सत अट्ठ पुत्र अवतरन काय ॥ ५७६ ॥
तन रख्यौ जोति मय देव थान। मिलि नारि अच्छरिय करत गान ॥
छं० ॥ ५७७ ॥ रू० ॥ ३०८ ॥

ढूंढा का फिर जन्म लेना और उसका वृत्तान्त चंद का वर्णन करना ॥

दूहा ॥ ईम आतम उद्धार करि। जनम लियो भुअ आइ ॥
सो हतंत कवि चंद कहि। बरन्यौ कवित बनाइ ॥ छं० ५७८ ॥ रू० ॥ ३०९ ॥

ढूंढा का वर देना और काशी में यज्ञकर तन त्यागना ॥

दूहा ॥ तब ढूंढा वर दान दिय। सुनि सत अट्ठ प्रसन्न ॥
कासी जाय सु जग्य किय। सित्त षंड किय तन्न ॥ छं० ॥ ५७९ ॥ रू० ॥ ३१० ॥

---

३०६ पाठान्तर-अनंग। पुत्री सय। काम वास ॥

३०७ पाठान्तर-ढिल्ली। गुफा। ढुंढा। बयठ। अठोत्तर। सो। तुठ ॥

३०८ पाठान्तर-दीय। दानवह। स। अप। पचन। चल्यो मग। समग। कज्ज जग। अठ अग्नि। स। मधि। हब्बि। सब्ब। स। पसाई। पसाइ। अट्ठ। अठ। अतवार। काइ। ज्योति। थांन। अच्छरीय। थ्यांन ॥

३०९-१० पाठान्तर-उधार लीया। भूम्म। आइ। वृतांत। चंदनें। बरन्यो सकल बनाय ॥ ३०९ ॥ ढुंढे। बरदांन। अठ। कीय। सत्त। कीय ॥ ३१० ॥

ढूंढा के दानव शरीर का मान और स्वरूप बर्णन ॥

कवित्त ॥ अंगह मान प्रमान । पंच सैं हथ्थ उने कह ॥
　　दुह उंचौ उनमान । विनय लच्छिनह विवेकह ॥
　　हथ्थ षडग विकराल । मुष्य ज्वालंघन सद्दह ॥
　　आनल दिन्नो राज । गयौ राषिस तन मद्दह ॥
　　जोगिनिय गुफा बोधह निगम । तप आदर किन्नो सु तन ॥
　　साधंत पवन तप उग्र करि । दुम रष्यौ उद्दार मन ॥
　　　　　　　　न० ॥ ५८० ॥ रू० ॥ ३११ ॥

ढूंढा का दिल्ली में पाषाणरूप हो जाना और स्त्रियों का उसे पूजना ॥

कवित्त ॥ असी बरस सत तीन । गुफा किन्नौ तप भारिय ॥
　　बैस वंस विचित्र भ्रम । भरै जमुना जल नारिय ॥
　　सारंग बज्ज्यौ वाउ । घटा बंधे जल बुट्टौ ॥
　　दौरी सब गुह मभ्भ । रूप पाषान सु दिट्ठौ ॥
　　मिलि नारि सबन अचरिज्ज करि । जल धोए उज्जल कर्यौ ॥
　　साषंड धूप दीपह चरिच । सित मन सिद्धौ आवर्यौ ॥
　　　　　　　　छं० ॥ ५८१ ॥ रू० ॥ ३०२ ॥

ढूंढा का अनंगपाल की सुता को वीर पुत्र होने का वर देना ॥

कवित्त ॥ दिय बीसल बरदान । कुष्य उपजै माहा भर ॥
　　बीरा रस उत्तान । जुद्ध मंडै न कोइ नर ॥
　　बीर जोति अवतार । भद्द जिह्वा तन भारिय ॥
　　नयन जोति संजोगि । पत्ति कुल पिता संघारिय ॥

---

३११ पाठान्तर–कहि अंग । मांन । प्रमांन । हथ । उन । लछनह । हथ्र । मुष । आनल । दीनौ । जो गिनीय । कीनो । पवन । रष्यौ ॥

३१२ पाठान्तर–अशी । बरष । शत । कीनैा । भारीय । बत्री अधम । विचीय अधंम । विचित्रय अधम । भरे । जमना । भारीय । नारीय । सारंग । बज्यौ । वज्या । वाय । वधे । वुठौ । दारी । मभ्भ । सुद्दिठौ । दीठौ । अरिज । धोय । उजल । तन मनि सुधि आवर्यौ । तन मन सुधि आचर्यौ ॥

३१३ पाठान्तर–दीय । बीशल । वरदांनि । कुष । कुष्य । उपजे । महा । रश । उतांन ।

दिष्षे सु नयन पुच्च करि प्रसिध । कियौ पाप इन भूव करि ॥
उप्पजै नारि अति रूप तिन । तेन लिन्न जाये सु धर ॥

छं ॥ ५८२ ॥ रू० ॥ ३१३ ॥

ढूंढा का वर देकर काशी जाना, वहां दानव योनि से मुक्त हो अवतार लेना-सोमेसर की परिग्रह के प्रबंध के लिये क्षत्रियों का उत्पन्न होना-जिन में से बीस अजमेर में श्रैार अन्य अन्यत्र हुए-सोमेस के वीर पुत्र पृथ्वीराज हुए ॥

कवित्त ॥ वर दिनौ ढूंढा नरिन्द । जाय कासी नट रिद्धौ ॥
अस्त लियौ अवतार । भट्ट रसना रस पिद्धौ ॥
सोमेसर परिगह । प्रबंध सित उपने षिचि नर ॥
हुए बीस अजमेर । विए उप्पने अपर धर ॥
सोमेस बीर सुत पिथ्थ हुअ । ठौर ठौर ऊपजि वत्रिय ॥
विधि विधि विनान अवलोक गति । अवर सूर आए मिलिय ॥

छं ॥ ५८३ ॥ रू० ॥ ३१४ ॥

पृथ्वीराज जी के परिग्रह के सामंतों के नाम श्रैार जन्म स्थानादि का वर्णन ॥

कवित्त ॥ हुअ निभ्भर कनवज्ज । जैन सलषं अब्बूगढ ॥
मंडोवर परिहार । करषि कंगुर चाहुलि दिढ ॥
बलि भद्र सु नागोर । चंद उप्पजि लाहोरह ॥
दिल्लिय अत्ता ताइ । बियाँ धर सामत सोरह ॥

ज्योति । जीट्ठा । भारीय । पति । संघारिय । संधारीय । द्वेषे । प्रसिद्दु । कीयैा । द्रूव । उप्पजी नारी । उपती । तेनश्लिन जाइ सुधिर । तेन लिंत जास्रे सुधर ॥ *

३१४ पाठान्तर-दीनैा । दीधो । सिधो । सिंधैा । अस्ति । लीयो । रशना । रश । सोमेशर । परिघृह । सित । शत्त । उप्पने । षित्र । हूए । भये । वीए । वीरा । ऊपने । अवर । पिथ उपजि । विनांन । आय मिलीय ॥

---

* पाठकों को इस रूपक से फिर सावधान होकर पढ़ना चाहिये क्योंकि कवि इस रूपक से पृथ्वीराजजी के जन्मादि की कथा की भूमिका बांधकर वृत्त वर्णन करता है ॥

राम हे राव जालौर धर। गोइंद गढ धामनि ग्रसै ॥
दाहिम्म बयानै उप्पनौ। प्रिथिराज परिघह बसै ॥
छं० ॥ ५८४ ॥ रू० ॥ ३१५ ॥

३१५ पाठान्तर मिभर। खिभर। कनवज्ञ। जेत सल्लष अबुगढ। लाहुल्लि। उपजि। अता ताय। समंता रांमदे गोइद। गढ। दाहिंम। बयाने। प्रिथीराज। परिगह ॥

इस रूपक से कवि ने पृथ्वीराजजी के सामंतो के नाम और उनकी उत्पत्ति के स्थानादि का वर्णन करना प्रारंभ किया है। यह विषय पुरातत्ववेत्ताओं के ऐतिहासिक शोधों में बहुत उपयोगी होने जैसा है–किन्तु इस ग्रंथ के अक्लित्रिम होने में भी एक प्रमाण रूप हो सकता है–और यह भी भले प्रकार ध्यान में रखने जैसी बात है कि यहां चंद अपनी उत्पत्ति लाहौर की अर्थात् "चंद उप्पजि लाहोरह" कहता है। इस महाकाव्य में बहुत से पंजाबी भाषा के शब्द मिलने से पुरातत्ववेत्ता विद्वान चंद की जन्मभूमि के विषय में पंजाब देश का अनुमान किया करते थे और पंजाबी अति वृद्ध पुरुष भी अपने देश के महाकविचंद का नाम वंशपरंपरा मे आज तक सुनते चले आते हैं परंतु अब हमको इस बात का निश्चय हो गया और पंजाब देश हिन्दी भाषा के काव्यों की अनुक्रमणिका में पहिली संख्या पर जा स्थापित हुआ क्योंकि अब तक इस महाकाव्य से प्राचीन कोई अन्य काव्य नहीं उपलब्ध हुआ है। कोई कोई विद्वान जो यह कहते हैं कि चंदकवि का होना केवल इसी महाकाव्य से विदित होता है। उनको अजमेर नगर के कैसरगंज में **चांद बावडी** अपने नेत्रों से देखनी चाहिये और चंद के पुरुषाओं का बनाया हुआ **भाटाबाव** भी उसी नगर में तारागढ़ को जाते हुए दृष्टिगोचर करना उचित है कि जो अजमेर के भाटों के कबजे से निकलकर बहुत समय तक टोंक के नव्वाब साहब के अधिकार में रहे हैं। फिर उन्होंने एक मोची को **चांद बावडी** दे दी थी कि अब म्युनीसीपैल कमेटी ने इस की चारों ओर की दीवार बना दी है और इस बावडी के चारों ओर एक बगीचा भी था जिसका हांसल कुछ थोड़े दिनों तक म्यूनीसीपैलीटी में जमा होता रहा है और अब वह बगीचा कटकर वहां बस्ती बसा दी गई है। चांद बावडी में नीचे उतरते दहिने हाथ की दीवार में प्रशस्ति का स्थान बना है कि जिसके पाषाण लेख को एक ८३ वर्ष का मुसलमान फकीर कर्नैल टाड साहब का लेजाना कहता है। इस के महाबरदान द्वार के दोनों ओर एक एक पत्थर के फूल खुदे हुए हैं कि जिसको अंग्रेजी में lotus अर्थात् कमल की जाति का फूल कहते हैं। यह फूल शिल्पशास्त्र के सिद्धान्तों में विज्ञ विद्वानों को बावडी की अति प्राचीनता सूचन करनेवाला दृष्टि आवेगा। चंद के विषय में कुछ और भी प्रमाण हमारी रचित **पृथ्वीराज रासे की प्रथम संरक्षा** में पाठक देख लें। इस महाकाव्य में प्रायः फारसी शब्द भी प्रयोग हुए हैं उनके विषय में हमने अन्यत्र कई एक प्रमाण प्रकाशित किये हैं परंतु यह भी विशेष करके हमारे पाठकों के ध्यान में रहने जैसी बात है कि चंद जिस समय लाहौर में उत्पन्न हुआ था उसके १०० सौ वर्ष पहिले से वहां **महमूदी सन्तान** का राज्य था। फिर क्या कोई यह अनुमान कर सकता है कि उस समय की हिन्दी में एक भी फारसी भाषा का शब्द नहीं मिल सकता था ? इन रूपकों में जिन जिन सामंतों के नाम आये हैं उनका पूरा पूरा वर्णन हम ग्रंथ के पूरे छप जाने पर लिखेंगे क्योंकि अभी हमारा काम केवल मूल पाठ शोधकर प्रकाशित करने का है ॥

पद्धरी ॥ उतपत्ति वास सामंत छंद । पाधरी छंद ब्रन्नै सु बंद ॥
दस तीन हुए दिल्ली प्रमान । हरिसिंघ बसै गढ्ढह बयान ॥ छं० ५८५ ॥
जैसलहमेर अचलेस भान । पज्जून वसै चीतोर थान ॥
कलि कुंड हुओ जंघार भीम । चहुआन आन रष्षैत सीम ॥ ५८६ ॥
वड भ्रात केरि लग्गो सु पाइ । चहुवान सु वर सामंत राइ ॥
समियांन गढ्ढ नरसिंघ राइ । पित मात कोरि आय सु भाइ ॥ छं० ॥५८७॥
देवरा धीर रिनधीर सथ्थ । पछ्छिवान देस प्रिथिराज तथ्थ ॥
जंघार भीम गढ जून वास । किन्नो सु जुद्ध भीमंग आस ॥ छं ॥ ५८८ ॥
लग्गौ सु लोह लिन्नौ दिलेस । सारंग राइ गोरी नरेस ॥
बारडह राइ सहसौ करन्न । अस्थिर वसै गढ आसमन्न ॥ छं ॥ ५८९ ॥
जुध करै जित्त कन्हाति राइ । चहुआन सूर उप्पारि घाइ ॥
सेवक्क कीन अप्पै सु जोर । तेजल्ल डोड वासी जुनोर ॥ छं ॥ ५९० ॥
कैमास सद्धि बलवंत वीर । लग्गो सु साइ चहुआन धीर ॥
तारन्न सूर भटनेर वास । प्रिथिराज पाइ कीनी सु आस ॥ छं० ॥ ५९१ ॥
भैांहा चँदेल गजनीय सेव । लग्गो सु घाव भूभ्भंत तेव ॥
उप्पारि लियौ सामंत राव । कीनी सु सेव अप्पह सु भाव ॥ छं० ॥ ५९२ ॥
अरसी चँदेल मार्‍यौ सकज्ज । भैा हा चँदेल दीनो सरेज्ज ॥
पानीय पंथ उत्तन्न देस । दीनौ सु फेरि दिल्लि नरेस ॥ छं० ॥ ५९३ ॥
कनवज्ज राइ भूभ्भंत नाम । रष्यौ सु अप्प कलि जुग्ग नाम ॥
चालुक्क पाट भोरा भुअंग । रष्यै सु कवरा पिष्य रंग ॥ छं० ॥ ५९४ ॥

३१६ पाठान्तर–उतपति । उत्तपत्ति । वाश । बरनैति । चंद बरनैति । बंध । दश । हूए । प्रमांन । गढह । बयांन । जेशलह । जेसल्लह । भांन । पांजुन । पजून । बसे । थांन । कूंड । हूवै । हुवो । चहुआंन । चहुवांन । आंन । रषेति • आनर रषैति । भ्रान्ट । लग्गा । सू । पाय । चहुवा न राई राय । समीयांन । गढ । राय । कारि । भाय । निरधीर । रनधीर । पछिअांन । देश । प्रिथीराजि । पृथीराज । तथ । जूंन । वाश । कीनै । सू लिन्यै । दिलेश । राय । नरेश । राय । सह । सो । करंन । आसमंन । करे । जित । कन्हांनराय । चहुंआन । उपार । उप्पार । सेवक । क्कीन । अपे । ते जल । जुनैार । सद्ध । लग्गा । पाय । चहुंवान । चहुंवांन । तरंन । वाश । प्रिथीराज । पाय । सू । भोहा । भोंहा । गनीय । बूंदी राज्य के पुस्तकालय की पुस्तक लिखी स० १९५४ में लग्गो–तेव के स्थान में "दस अग्य अप्पह सु भेव" करके पाठ है । और छंद ५९१ पिछली तुक उस में है ही नहीं । लग्गा । भुभ्भंत । उपारि । लीयो । किनी । चंद्रेल । सकज । भे हा । भोंहां । चंदल । सूरज । सुरज्ज । पांनीय । उतन । उतंन । देश । सू । नरेश । कनवज्ज राज भुभ्भंत तांम ।

जावलो जल्ह दष्षिनी देस। प्रिथिराज राइ किन्नौ प्रवेस ॥
सनंज नगर दीनौ उतन्न। पूरन्न माल प्रिथिराज तन्न ॥ छं ॥ ५९५ ॥
सूरत्ति वास चहुआन राइ। कह्यौ सु भ्रात रष्यौ सु दाइ ॥
बडगुज्जरहराम अल्ली नरेस। दिन प्रत्ति षांन भंजै सदेस ॥ छं ॥ ५९६ ॥
मुक्कले दूत प्रिथिराज तथ्य। सेवा सु पाइ उप्पर जु हथ्य ॥
प्रिथिराज नाहि दो देस दिद्ध। मारुत षांन अल्ली प्रसिद्ध ॥ छं ॥ ५९७ ॥
करि वास तब्ब गुज्जर निसंक। मारयौ षांन आलील बंक ॥
हड्डा हमीर नैन वारिद्ध। लग्गे सु पाइ दस देस दिद्ध ॥ छं ॥ ५९८ ॥
षेता षंगार दै भ्रात राइ। परयौ दु काल देसं सु भाइ ॥
दिल्लीय देस गुड्डा सु मंडि। रष्यै सु वास भट सुभट झुंड ॥ छं ॥ ५९९ ॥
परमार कनक जैचंद वास। किन्नौ सु षून इक पाचि दास ॥
लिय पाच ग्रह्यौ प्रिथिराज देस। लग्यौ सु पाइ आयौ नरेस ॥ छं ॥ ६०० ॥
सांषुलौ सहसमल मात पष्य। तप करत अनंगह गयौ रष्य ॥
लग्यौ सु पाइ प्रिथीराज आइ। दीनौ सु देस षटूय साइ ॥ छं० ॥ ६०१ ॥
कूवैत.र लियो दिल्ली नरेस। तब हुए सत्त सामंत भेस ॥
छं० ॥ ६०२ ॥ रू० ॥ ३१६ ॥

कवित्त ॥ ढुंढा नाम * दानव उतंग। दियो फल अंब विसालं ॥
बंदि लीन नृप राज। आय फिर गेह सु चालं ॥
सत्त भाग कह अग्ग। बंटि दिय भ्रत्त समानं ॥
तिनह सूर सामंत। कित्ति रष्यन चहुवानं ॥

जावल्ले जल्ल दिषिनीय। जुग। फग। नांम। चालूक्क। रष्यं। पिय। रष्यै सुक्रचराषिय रंग। देश०। दषनीय। प्रिथीराज। राय। कीनो। दीवो। उतंन। पूरन माल। प्रथीराज। तंन। सूरति। व्रात। बडगुज्जर रांय। अली। नरेश। सुदेश। मुकले। पृथीराज। तब। पाय। सु। प्रिथीराज। देश। दिध। अली। प्रसीद्ध। तब। गुजर। मारीयो। हाडा। हामा। दमीर। नेन। लगे। पाय। षेतल षंगर। परियो। देसां। भय। दिलिय। दलीय। देश। गूढा। भट्ट। जैद। पात्रदास यहो। प्रथीराज। देश। आये। मानि। पषि। करित। रिषि। प्रथीराज। आय। कीनो। षटूच। लीयो। दिली। सित्त ॥

३१७ पाठान्तर–ढुंढुं (नाम * विशेष है) उतग। विसालं। गेहे। सु बालं। अय। भृत। समानं। चहुंवांन। अति प्रथम। अमिय प्रकाल। सगह। ढूंक। सवंत। सवत। संवत ॥

रजमेल चंद फल्ल अमिय प्रथु । सबर साचि सोवन सु गहु ॥
इकदस समंत पंचह समै * । भए थान पंचम सु पहु ॥
छं० ॥ ६०३ ॥ रू० ३१७ ॥

आना राजा का उजड़ी हुई अजमेर के फिर बसाकर राज करना ॥

दूहा ॥ अनल आनि मानह मिल्यौ । कहि सब बत्त सुनाइ ॥
लोग महाजन संग लै । भूमि बसाई जाइ ॥ छं० ॥ ६०४ ॥ रू० ॥ ३१८ ॥

पद्धरी ॥ आना नरिंद अजमेर बास । संभरीय कीन सोव्रन्न रास ॥
नियनाम कह्यौ आना नरिंद । अरि धरनि बीर मंड्यौ सु दंद ॥ छं० ॥ ६०५ ॥
ग्रामान ग्राम तोरन उतंग । बन बढ्ढि कढ्ढि निधि निधि पुरंग ॥
पसु पंषि सद्द स्रुत मंडलेस । जल न्हान दान ब्रह्मन सु देस ॥ छं० ॥ ६०६ ॥
हारम्य रम्य फिरि मंडि लोइ । दालिद्र दीन दीसै न कोइ ॥
चैाघटि ‡ सत्त बरषं प्रमान । आना नरिंद तपि चाहुवान ॥ छं० ॥ ६०७ ॥

जैसिंह जी का गद्दी पर विराज राज करना ॥

षग ध्रम्म देस दिय पुत्र हत्थ । जैसिंघदेव तपि राज तत्थ ॥
छिति छत्र सीस जैसिंघदेव । निधि लई बीर बीसल षनेव ॥ छं० ॥ ६०८ ॥
बिंटु लीय बीर आना नरिंद । बीसल तडाग मधि द्रव्य कंद ॥
पायौ न बीर तिन द्रव्य छेह । कंचनह काम मंडाय गेह ॥ छं० ॥ ६०९ ॥
सब द्रव्य दीन तिन विप्र हत्त । भंडार भुरिय धन ध्रम्म वत्त ॥
स्रुति सुनहि स्रवन जंपत पुरान । साधरम करम चलि चाहुवान ॥ छं० ॥ ६१० ॥
कलि नीति गरुअ गहि मुक्कि । कुल रीति चित्त रंचक न चुक्कि ॥
सो बरस अट्ठ तप राज कीन । आनंद मेव सिर छत्र दीन ॥ छं० ॥ ६११ ॥

* यह पाठ हमने सं० १८५९ की पुस्तक का रक्खा है किन्तु सं० १६४०, सं० १७७० और सं० १८४५ की में "इक दस संवत पंचह समै" है कि इनमें से जिसे विद्वान ठीक समझें उसे ग्रहण करें ॥

३१८ पाठान्तर-अनिल । अनलि । सुनाय । लोग । बसाईय । बसाइय । जाय ॥

३१९ पाठान्तर-आनां । नरिद । नरंद । सभरीय । सोव्रंन । राशि । नांम । आनां । मंड्यौं तैारन । बढि । कढि । पुरंगं । पंष । सदस्तुत । मंडलैस । न्हान । दांन । हारंम्य । मंड । लोई । लोय । दारिद्र । दीन दीन । दीसे । कैाई । चै। घड़ी । सत । प्रमांन । नरिदं । चहुवांन । धम हथ । हथ्थ । तथ । छत्रचीस । जैसिह । निध । बीर सल । षनैव । वंदुलीय । विटलीय ।

आनन्दमेवजी का राज करना ॥

तहां तप्पि तेज आनन्द मेव । बराह रूप दिष्यौ सु देव
धरनी विहार आयास साद । मंड्यौ सु राज पहुकर प्रसाद ॥ छं० ॥ ६१२ ॥
सो * वरष राज तप अंत कीन । सिर छच सोम पुचह सु दीन ॥

सोमेश्वरजी का सिंहासन पर विराज राज करना ॥

सोमेस सूर गुज्जर नरेस । मालवी राज सब षग्ग षेस ॥ छं० ॥ ६१३ ॥
मारू बजाइ भट्टीन थान । घल मोमि लई बल चाहुवान ॥
दिल्लेस व्याह तोंवर घरेस । तिह ग्रब्भ भयो पीथल नरेस ॥ छं० ॥ ६१४ ॥
आनन्द राज नंदन सु सोम । मोरिया दलनि तिन कियो होम ॥
निय पुर सु नयर सुर लग्गि धोम । आनन्द केलि अजमेर भोम ॥
छं० ॥ ६१५ ॥ रू० ॥ ३१६ ॥

सोमेश्वर जी की शूरता का संक्षेप वर्णन ॥

कवित्त ॥ जिहि सोमेसर सूर । सूर जित्त षुरसानी ॥
जिहि सोमेसर सूर । चढिवि गुज्जर धर भानी ॥
जिहि सोमेसर सूर । लियो नाहर परिहारिय ॥
बल उप्पम कवि चंद । चंद राहा जिम मारिय ॥

नरिद । छेह । देह । कांम । गेह । येह । दिन । भंडारि । श्रवन सुनहि । जपत । पुरांन । चाहु-वांन । गरुव । गरुव मुकि । कलि । रीत । चित । रवक । चुकि सो । अठ । तिहां । तपि । रूप्प । देष्यौ । सद्दु । प्रसद । सो । सोम । सोमेस । शूर । गुजर । षग । षेस । मांरू । वजाय । भट्टी । थांन । लइ । बंल । चाहुंवांन । दिलेस । दिल्लेश । तुंवर । घरेश । गर्भ । ग्रभ । पित्यल । पीथ्यल । नरेश । मोरीयां । दल । दलह । कीयो । नैर । लगि । कल ॥

* चोघट्टि सत=इस के विरुद्ध कोई दूसरा पाठ हमारे पास की पुस्तकों में नहीं मिलता किन्तु कोई कोई वृद्ध कवि **चैासट्टि सत्त** करके मूल में पाठ होना कहते हैं और उससे ६४+७=७१ वर्ष की संख्या निकालते हैं और कोई १०० वर्ष और चार घड़ी और कोई ७ वर्ष और चार घड़ी का वाचक पाठ कहते हैं किन्तु ऐसे सब स्थल पक्षपात रहित विद्वानों के सूक्ष्म विचार करने योग्य हैं

* इस **सो** शब्द का पाठ किसी किसी पुस्तक में **सैा** भी है कि जिससे वर्ष की संख्या के समझने में बड़ी गड़बड़ हो जाती है । यह स्थल भी विद्वानों की बुद्धि को श्रम देने जैसा है । यदि कोई शुद्ध अंतःकरण से पूर्वापर का लेखा लगा देखेगा तो वह चंद कवि की संवत संबन्धी कठिनता को जान कर बहुत प्रसन्न होगा ॥

३२० पाठान्तर–जिहिं । सोमेत्पर । जिने । षुरसांनी । चढै । चढे । भांनी । भांती । लीयो । परिहारी । परिहारीय । वलि । उपम । राहां । सारी । मारीय । बैरन । दोरि । राजोर । बर । पां । मइ । गुजर । गूजर । गजयो ॥

बर बीर धीर धारह धनी। संभरि बैरिन भंजयौ ॥
इक दौरि गौर राजौर वह। षां बड गुज्जर गंजयौ ॥

छं० ॥ ६१६ ॥ रू० ॥ ३२० ॥

दिल्ली के राजा अनंगपाल जी पर कमधज्ज का चढ़ना ॥

कवित्त ॥ ढिल्लीवै आनंग। राज राजंग अभंगं ॥
ता उप्पर कमधज्ज। सेन सज्जी चतुरंगं ॥
अग आलस आभून। पुट्टि बंधे गज पत्तं ॥
ता पुट्टै विजपाल *। सुभर सज्जै रन मत्तं ॥
धजनेज भोज नीसान ढल। मनु बसंत रंज्जिय विपन ॥
करि कूच कूच उप्पर धरा। बेध अंतर सपन ॥

छं० ॥ ६१७ ॥ रू० ॥ ३२१ ॥

कमधज्ज की चढ़ाई सुन अनंग का कालिंद्री उत्तर मुकाम करना ॥

कवित्त ॥ सुनी वत्त आनंग। अंग लग्गो रस बीरह ॥
भ्रकुटि वक्र रत द्रिग्ग। चित्त जुध रत्त सरीरह ॥
बोलि भित्त अप्पान। कहिय सू बान मत गुन ॥
चढत राइ दिल्लेस। करिय नीसान बीर धुन ॥
गज बाजि रथ्थ पइ भर गहर। सजिय सेन सनमुष चलिय ॥
उत्तरि कलिंद्रि मुक्काम किय। दस दिसान वत्ती सलिय ॥

छं० ॥ ६१८ ॥ रू० ॥ ३२२ ॥

---

* स्मरण में रखने की बात है कि संप्रत शोधों के अनुसार भी कन्नौज के राजा विजयपाल जी, दिल्ली के राजा अनंगपालजी और अजमेर के राजा सोमेश्वर जी परस्पर समकालीन थे ॥

३२१ पाठान्तर-ढिली। ढिल्लावै। राजग। अभंगम। कनवज। सजा। चत्रुंगम। अंग। अग्र। पुठिं। पुठि। बंधे। पंतं। पंत। पुठे। पुठिं। विजेपाल। सजे। मंतं। मंत। नीसांन। ढल्ल। मनों। वसंत। रजय। विपन। कुच २। उपरि। धरहि। धरहिं। आद। वेद्य। संपन ॥

३२२ पाठान्तर-सुनिग। सूनिग। वत। लगौ। लग्गे। दश। भ्रृगुटि। चक्र। द्रिग रत। चिंत। भ्रृत। अप्पांन। शवांन। स वांन। दिलेश। निसांन। धूंनि। रथ। पय। मन मुष। संमुष। उत्तरि। कलिंद्रि। मुकांम। दश। दशांन। वती। हलीय ॥

कमधज्ज की चढ़ाई सुन सोमेस का अनंग की सहायता को दिल्ली जाना और वहां पहुँच अनंगपालजी से एकान्त में मंत्रणा करना ॥

पद्धरी ॥ संभरिय बत्त संभरि नरेस । आभासि भित्त अप्पा असेस ॥
कमधज्ज राज तोंवर नरिंद । मत्तौ सु दुनै आबद्ध दंद ॥ छं० ॥ ६१९ ॥
अप्पन सहाय सज्जौ सपूर । बैठन्न ग्रेस नह भ्रम्म सूर ॥
करिकैं सु जीति आवें अपान । कै सजैं वास कैलास थान ॥ छं० ६२० ॥
मन्नेव सूर भर मंत वाम । घुम्मरे नद्द नीसान ताम ॥
चढि चल्या सेन सजि चाहुवान । उप्पटे जानि सत सिंधु पान ॥ छं० ॥ ६२१ ॥
अग्गे सु सोम दिल्ली सहाय । अग्गेव विष्य हर कंठ लाय ॥
अग्गेव मनी लभ्भी फुनिंद । अग्गेव सरद निसि उग्गि चंद ॥ छं० ॥ ६२२ ॥
अग्गे सु चक्र लिन्नौ गुविंद । अग्गै सु वज्र कर चक्री इंद ॥
बिहु बाह सूर सज्जे समंत । बेनै विरद्द बंधे अनंत ॥ छं० ॥ ६२३ ॥ *

* यह छंद सं० १६४० । १७७० और १८४५ की पुस्तकों में नहीं है किन्तु सं० १८५९ की लिखी में है ॥

इस छंद की अंत की तुक में "बेनै विरद्द बंधे अनंत" है कि जिसका अर्थ यह होता है कि बेन ने अनेक विरद बांधे अर्थात् कहे । यह बेन कवि इस महाकाव्य के रचनेवाले चंद का पिता था और वह सोमेश्वरजी के इस समय साथ था । अब तक चंद से पहिले का कोई काव्य किसी भी कवि का किसी के जानने में नहीं है किन्तु हमने जो एक चंद छंद वर्णन की महिमा नामक पुस्तक सं० १६२९ की लिखी शोध की है उस के पीछे मेवाड़ राज के महाराणा जी श्री उदयसिंहजी के महाराज कुमार श्रीसगतसिंहजी के पंडित विष्णुदासजी ने अकबर बादशाह के भाट गंगजी से अजमेर में पटोलावाय के मुकाम पर चंद के बाप कवि राव बेन का नीचे लिखा छिप्पय अर्थात् कवित्त लिखा था वह हम प्रकाश करते हैं । छप्पय में बेन ने पृथ्वीराजजी के पता सोमेश्वरजी को आसीस दी थी-

छप्पय ॥ अटल ठाट महि पाट । अटल तारागढ थानं ॥
अटल नग्र अजमेर । अटल हिंदव अस्थानं ॥
अटल तेज परताप । अटल लंका गढ डंडिव ॥
अटल आप चहुवान । अटल भूमी जस मंडिव ॥
संभरी भूप सोमेस नृप । अटल छत्र ओपै सु सर ॥
कवि राव बेन आसीस दें । अटल जुगां रजेस कर ॥ १ ॥

अग्गैं सुदंति पंतिय विहर । चमकंत अंदु मद झरत भूर ॥
धजनेज चमर बंबर बिनान । मन हू कि पव्व पल्लव किसान ॥ छं० ॥ ६२४ ॥
धमकंत धरनि ऋद्धि सिर निहाय । हल हलिय द्रिग्ग उद्रिग्ग थाय ॥
घुर धूरि पूरि जुहिन भमित्ति । दिसि व दिसि राज पसरंत कित्ति ॥ छं० ॥ ६२५ ॥
रह घरहि सोम पर चाउ कज्जि । मन हू कि दुलह बर व्याह रज्जि ॥
संपत्त जाय दिल्लिय पुरेस । आनंग राज मिल्लं असेस ॥ छं० ॥ ६२६ ॥
ग्रह बत्त कुसल पूछिय असेन । रस हास पेम बढ्ढे सु हेत ॥
विधि विद्धि भोज भोजंत राय । रुचि सु चित घट रस्स भाइ ॥ छं० ॥ ६२७ ॥
आहार पान घन सार पूर । बैठे सु आइ एकंत सूर ॥
सब कहिग बिद्धि कमधज दिसान । सुद्वरै बत्त सो करहु पान ॥
छं० ॥ ६२८ ॥ रू० ॥ ३२३ ॥

अनंग की बात सुन सोमेस का रोस में आय लड़ने को तयार होन ॥

कवित्त ॥ सुनिय बत्त जपि सोम । रोस उभ्भार झार असि ॥
रसन दसन दब्बंत । रत्त द्रिग जुच्छ हथ्थ कसि ॥

इसी के साथ उसी पुस्तक में चंद के नागाप्रकरण का कहा हुआ यह नीचे लिखा दोहा भी लिखा है-

दोहा ॥ ले कूंजा नृप पीथुला, सांमत चमूं समंद ॥
बेन नँदन कनवज गमन, चंद करन कइ दंद ॥

३२३ पाठान्तर-संभरीय । नरेचा । अभासि चितै आपां । अपा । अशेश । कमधज्ज । राव । तूंवर । नरिंद । दुन्हैं । आबद्दु । दुंद । सज्जौ । वैवच । येह । धम । कैकरैं जीत आना नरिंद । आनिग । अपांन । थांन । कैं सजैं थांन कैलास इंद । मंनेव । मंचैव मंत भर सूर ठांम । घघुमरेद्व नीसांन तांम । मनेव । घुमरे । चाहुवांन । उपटे । जांनि । सिंधू । पांनि । पानि । आगीं अग्गें । अयैं । अगेंत्र । अंगेव । अयेंव । विष । लाइ । अगेंव । अयेव । अयैंव । मंनि । मचि । लभी । फूंनिंद । अयैंव । अगेंव । रत अग्गें । अगें । बेन । बानैं । अयैं सदंत । पंभूर । पंडूर । झरन । बनांन । मत हूं । पव । क्रसांन । सर । हलीय । दुग । अदुग । दूंग । अद्रूग । पुरि धूरि रिंपुरि सुदिन भमित्त घुररि पूरि धूरि मुद्दिन लगित्त । वि । पसरंति । घडइ । घडइ । कज । मांन हूं । मानहु । रज । संपत । द्विलियपुरेश । राय । मिले । ग्रह । कुशल । पुछिय । अशेत् । रश हाश । वढे । विधि विधि । चित । रश । पांन । आय । सब्ब । विधि । कमद्दुंज । दिसांन । सुद्दुरहि । बत हूं । पांन ॥

३२४ पाठान्तर- वत । वत्त । जप । रोश । उभार । झारि । दुतिवंत । मुछ । हथ । विचारिय । अप्पांर । अपनीय । अचि । भारीय । चाहुआन । वहुवान । झंपो । दलां । मांनहुं ॥

इह कमंध आमंध । राज सम जंग विचारिय ॥
सजै सेन अप्पनी । भिरै भंजै अरि भारिय ॥
चहुआन राय आनन्द सुअ । अति उमाह भारथ मनह ॥
अह मग्ग लग्गि झंपै दलह । बात चक्क मानहु तिनह ॥
छं० ॥ २९ ॥ रू० ॥ ३२४ ॥

दोनों राजाओं का डेरों पर जाना और पिछली रात को युद्धारंभ होना ॥

दूहा ॥ इह परिट्टि * राजन उठे । गय अप्पाने ठाव ॥
निसा जाम रहि पाछली । भयौ निसान निघाव ॥
छं० ॥ ६३० ॥ रू० ॥ ३२५

सोमेस की सहायता से अनंग की विजयपालजी के साथ लडाई ॥

भुजंगी ॥ रही जाम एकं निसा पच्छि यानं । बजे नद्द नीसान बीसान जानं ॥
चढ्यौ राज आनंग सोमं समेतं । बढे हास रासं चितं प्रीति हेतं ॥ छं० ॥ ६३१ ॥
सुभै सेन छत्तं धजा नेज माही । मनों बद्दलं मभ्भ रंज्जै सु राही ॥
सज्जे पष्षरं बाज दंती सनेनं । सनाहंत भीतं चितं जुद्ध जेनं ॥ छं० ॥ ६३२ ॥
इतै आनि दूतं कही बत्त साजं । सजे सेन आयौ विजैपाल राजं ॥
स्त्रपं व्यूह आकार सज्जे सभारं । दढं फन्न पुंछं रचे चित्त सारं ॥ छं० ॥ ६३३
सुने बत्त आनंग चित्तं विचारी । कही सोम सीषी बँधै बंध भारी ॥
सजो सेन अप्पान व्यूहं गरूरं । गिलै स्त्रप्पतामं हुवै जित्ति सूरं ॥ छं० ॥ ६३४ ॥

---

* हिं० परिट्टि (सं० स्त्री० परीष्टि = Inquiry, research, &c.) से है ॥

३२५ पाठान्तर-परट्टि । परठि । अप्पानै । ठाह । जांम । पछली । निसांन । नघाय ॥

३२६ पाठान्तर-जांम । इक्कं । इक्कं । पछियनं । ब्रजे । नीसांन । बरसांन । चठे । सोमे । सोम । समंत । चठे । हाश । रास । राशं । चित । सुभे । छेत्र । नेन । मांही । मनौ । बदलं । बदल्ल । मभ्भ । रचे । रज्ये । पषरं । सनेनं । सनाहंति । भितं । चित्तं । जूद्ध । जैनं इत्ते । इतें । आंनि । आय । सभ्भे । आयो । विजिपाल । बिजेपाल । अपं । स्त्रप । सज्जे । सु भारं । दंढं । फन फन्न । पुछं । भृत्ति । भित । सुनै अवन वैनं वतं विचारी । सिरकं । सिषं । बंधो । सजो । अपान । कहरं । गिले । अप । जिति । चंचु । राय । तिन । राजं । विछ । चोरंग । तयं तुट्टु । जय । उधीर । पिछ । धरा धार उधार बीरं सु नेवं । पंड पिंड । षंड षंड । लज्ज । सेज्जे । सजै । पुछ । पथ्य । कूरंभ । जिने । जित्तीया । जितिया । अनेक । अथ । नंगं । तिन । अग । आतस । झारे । दुयं । गेनं । उडे । कंपे । बढे । झंडा । विषानं । बजे । अनद्द । आनंद्द । अंनद्द । गजे । निसांनं ।

सज्यौ चंच ग्रीवा सु सोमेस रायं । तिनं संभरी लाज राजं सहायं ॥
दिसा दाच्छिनी पक्ख चैारंग बीरं । कुलं चाहुवानं जयं युद्ध भीरं ॥छं०॥६३५॥
बियं पक्ख बीरंम बीरंग देवं । धरा धार उद्धार धारं सु नेवं ॥
पगं एंड आनंग राजंग पालं । पंड पंडं भुजं लज्ज भालं ॥ छं० ॥ ६३६ ॥
सजे पुछ्छ कोरंभ जैसिंघ नामं । जिनें जित्तिया जुद्ध अन्नेक ठामं ॥
सजे अग्ग पंती मदं मोष नग्गं । तिनं अग्ग आनन्द भारं उतंगं॥ छं०॥ ६३७॥
दुवे सेन मिल्ली उडी रेन पूरं । कँपे कायरं सूर बढ्ढे सनूरं ॥
धजा नेज ढालं पताषी दिसानं । बजे सिंधु आनद्द गज्जे निसानं ॥
छं० ॥ ६३८ ॥ रू० ॥ ३२६ ॥

कवित्त ॥ बज्जि गह्वर नीसान । अग्गि अग बान बिकुट्टिय ॥
* दरिया दधि किय मथन । † भोम फट्टिय षह तुट्टिय ॥
करषि मुट्ठि कम्मान । तानि कन बान कनं किय ॥
मनहुं चिल्ह दिसि सदल । ‡ भोरं बासं नभनं किय ॥
रुधि मग्ग मिच षह मुद्दयौ । सुभर सोम मत्ता गहन ॥
सर सार सार उप्पर सिलह । मनु मेघ बुँद मद्दी महन ॥
छं० ॥ ६३९ ॥ रू० ॥ ३२७ ॥

बिराज ॥ चुरंगी सु बीरं । जुटे जुद्ध भीरं ॥
कुटे मोष बानं । मुदे आसमानं ॥ छं० ॥ ३४० ॥
परे बप्प धायं । करै कूह कायं ।
उभारंत सेलं । हुवं सेल भेलं ॥ छं० ॥ ६४१ ॥
तनं छिद्र कालं । रुधिंजा प्रनालं ॥
बहै धार षग्गं । निनारंध रग्गं ॥ छं० ॥ ६४२ ॥

३२७ पाठान्तर-नीसांन । अगि अगिबांन बिकुटीय । * कि। दीया । कीय । मथन । † कि । फट्टीय । तुट्टीय । मुंछ । क्रमांन । कम्मांन । क्रांन । क्रिन । बांन । छनंकिय । मनहुं । चिलि । ‡ कि। भैार । भैांर। भोर । वास । नभनं । मग । मुदयो । सुभर भोम । मनो मेघ बुंदह महून । मंनों मेघ बुंद मह महून । महि ॥

३२८ पाठान्तर-चैारंगीश । जुटें । जूटे । भारं । छुंटै । कूटे । बानं । सुदे । वप । थायं । करे । कहु । हुए । सेल । तिनं । छद्र । रुधिज्जा । रुधिजा ।-बहैं । षग्गां । डग्गां । रंग्गं । त्रुटै । तुटें । दन । करगै । करंगे । चिहारी । परै । परें । थांनं । कल कोट जांरी । कोट । हय । धरे । रुड । लुलं लोथ मत्तं । कटै बंधन भथैतं । कटे । भंतं । चैारंगी । वरसिंघ । वरंसिघ । बथ । टुअ । मल । जम । दृढं । बढं । बरसिंह । बरसिंघ । पितं । परै । बधि । नैतं । पच । भीर । कटे । भगै । दकि । जितै ॥

तुटे दंत जारी। करै गै विहारी ॥
परे भूमि थानं। कलं कूट जानं ॥ छं० ॥ ६४३ ॥
हयं षंड षंडं। धरं रुंड मुंडं ॥
लुथं लुथ्थ मत्तं। कटं बंन भत्तं ॥ छं० ॥ ६४४ ॥
चुरंगी सु तत्तं। बरं सिंघ उत्तं ॥
मिल्यौ बथ्थ आनं। दुश्रं मल्ल जानं ॥ छं० ॥ ६४५ ॥
झिलै जंम दढ्ढं। गलं लग्गि बढ्ढं ॥
बरं सिंघ षेतं। परे बंध नेतं ॥ छं० ॥ ६४६ ॥
भयं पंच भीरं। कटे पास बीरं ॥
भगे दढ्ढ वानं। जिते चाहुवांन ॥ छं० ॥ ६४७ ॥ रू० ॥ ३२८ ॥

गाथा ॥ भग्गो दल नर सिंघं। जंगं जित्ताइं राइ चैारंगी ॥
बाई दिसि बर बीरं। लग्गे जुद्धाइं षग्ग मग्गायं ॥
छं० ॥ ६४८ ॥ रू० ॥ ३२९ ॥

रसावला ॥ * षग्ग साहिं नगा। सेन सेनं अगा ॥
सार धारं मगा। कूह कूहं बगा ॥ छं० ॥ ६४९ ॥
धाय यों ठंनकी। आहिरं घंनकी ॥
कंठ गीरं मता। बारुनी पी मता ॥ छं० ॥ ६५० ॥
बीर लुथ्थं लुथं। मिल्ल बथ्थं बथं ॥
तुट्टि तंतं अती। गज्जनीयं दंती। छं० ॥ ६५१ ॥
नालि ज्यों कढ्ढनी। सूर यों बिढ्ढनी ॥
उड्डि लोहं लुहं। मिल्ल जोहं जुहं ॥ छं० ॥ ६५२ ॥ रू० ॥ ३३० ॥

---

३२९ पाठान्तर-भगो। बरसिंघं। बरसिंह। जंग। जिताइ। राय। चउरंगी। वाइ। दीसि। लगे। मग्गइ। मगाइ ॥

* इस छंद का नामान्तर विमोह अर्थात् विमोहा भी है और वह दो दो रगण का होता है ॥

३३० पाठान्तर-षगं। संग। साहि। साहं। नंगा। सजै सेन अंगा। सजे सेन अंगा। सारं धार। क्रुंह कूह वमा। क्रुहं क्रूह वगा। विघायं ठनकी। अहीरन धनंकी। अहिरं धनकी। कठंगी रमता। कठंगी रमता। वारुणी पिमत्ता। वारूणि पिमंता। परी लुथ लुथं। परी लुथा लुथ्य। मिलै वथ वथ्थं। वथं। तुटीतंन अती। तुटी तंति अंती। गरजंत दंती। नालि ज्यैा कढंती। सूरज्यों वढंती। सूर ज्यों बढती। उडे लैाह लोहं। उडे लोह लोहं। मिलें जोह जोहं। मिले जोह जोहं ॥

इस रूपक के पाठान्तरों को विचारने से पाठकों को ज्ञात होगा कि वे कैसे कैसे अद्भुत और विद्वानों को भी भुला देनेवाले हैं ॥

कवित्त ॥ वढन बीर बीरम्म । बीर कमधज सैं जुथ्यौ ॥
ता उप्पर गजराज । आइ मद मोष उपथ्यो ॥
इच्छित संग उभ्भारि । बिरचि बाही गज मथ्यह ॥
जाइ ठनंकिय घंट । कंठ सोभा सुभि तथ्यह ॥
गहि संग सूर लीनी हबकि । जै जै सुर आकास कहि ॥
रुधि धार छुट्टि संमुह चली । मनों मेर सरस्सत्ति बहि* ॥
छं० ॥ ६५३ ॥ रू० ॥ ३३१ ॥

भंजि मुष्ष गजराज । अप्प सेना उर धारिय † ॥
ता मध्ये सै तीन । फिरग संमुष ह्वै डारिय † ॥
ता मध्यें वाघेल । राइ रिपु सल्ल मह्हा भर ॥
घरी एक रन रंग । तुट्टि धर धार गह्हो धर ॥
जित्तौ सु जंग धारह धनिय । बिभक्ख बीरं † बित्तौ जहां ॥
भजि और भत्त छंडे रिनह । गे राज बिजपाल तहां ॥
छं० ॥ ६५४ ॥ रू० ॥ ३३२ ॥

दूहा ॥ बीर देव सम बीर लरि । भग्गि सेन कमधज्ज ॥
ता पच्छैं सोमेस पर । उड्डि सार बज रज्ज ॥ छं० ॥ ६५५ ॥ रू० ॥ ३३३ ॥

---

* ये तुकें बूंदी राज के पुस्तकालय की पुस्तक सं० १८४५ की में नहीं हैं ॥

३३१ पाठान्तर-बीरंम । कमघज्ज । सें । सु । उपर । गजराजं । आय । इहत । उभारि । बाहि । मथह । जाय । कंति । तथह । संगि । समुह । संमुंह हेडा रिय । चलिय । मनहु । सति । बिहि ॥

† पाठको ! हम बीसलदेवजी की दानव कथा को अद्भुत् रस में कवि का लिखना टिप्पण २६० में कह आये उसी तरह इस दिल्ली के राजा अनंगपाल जी और कनौज के राजा कमधज्ज बिजैपालजी की लड़ाई का वर्णन वीभत्स और वीर रसों में कविने लिखा है कि इस बात की वह हम को युक्ति से सूचना अपने **"विभत्त् बीर बित्तौ जहां"** वाक्य से करता है। यह महा-काव्य कबि ने नव रसों में लिखा है अतएव जहां हम आप को सचेत न भी करें वहां आप विचार कर रस को समझ लीजिएगा ॥

३३२ पाठान्तर-मुष । सेनह । धारीय । मध्र । संमुंह हे । संमुह हहै डारिय । मधे । बघेल । बघ्येल । राय । सल । तुट्टि गइ । गई । जितो । स । धनीय । जिहां । वोर । और । भत्तं । भ्रित्त । छंडै । रनह । गाइय । गये । बिजैपाल तिहां ॥

३३३ पाठान्तर-दोहा वीर । बीर । भग्ग । कमधज । पिछे । पछे । सोंमेस उडी । रज ॥

कवित्त ॥ परी भीर सोमेस। सोम बंसी सहाय भय ॥
मार मार उचरंत। सेन चतुरंग हयग्गय ॥
गजदंता बिकुरंत। बीर भेरी झननंकन ॥
टोप टूक बिकुरंत। षग्ग भागत रननं कन ॥
रस रास बीर कमधज्ज भय। संमुह बीर निहाइया ॥
संभरी राव संभारि कल। लग्गौ लोह उचाइया ॥
छं० ॥ ६५६ ॥ रू० ॥ ३३४ ॥

पद्धरी ॥ उचाय लोह लगि व्योम थान। मानों कि हरिय बल कलन बान ॥
जुट्टै सु अरिन दल मझ्झ जाइ। मानों कि सिंघ गज जूथ पाइ ॥ छं० ६५७ ॥
हन बिद्ध सोम मिल लोह पूर। आवद्ध रीठ मत्ती करूर ॥
कन नंकि बान बजि गोम धंक। कायर पुलंत सूरा निसंक ॥ छं० ॥ ६५८ ॥
दल मिलग सेन बे बाह बीर। बरसें अनंग ग्रज्जंत धीर ॥
माचंत कूह बजि लोह सार। जुट्टंत सूर रिन करि पचार ॥ छं० ६५९ ॥
राजंत राग सिंधू * कराल। बाजंत बज्ज जनु मेघ काल ॥
हलकंत घाव वाहंत धीर। किलकंत नद्द नारद्द बीर ॥ छं० ॥ ६६० ॥
डहकंत डक्क डाइन डरान। गहकंत गिद्धि सिद्धनिय थान ॥
नाचंत देव मचकंत फूल। लहकंत दुग्ग मन मथ्थ हूलि ॥ छं० ॥ ६६१ ॥
उररीय सेन सजि अनगपाल। भर हरी भीर कमधज्ज विसाल ॥
सत पैंड जाइ फिर लग्गि घाय। आतार रीठ मत्तौ उराय ॥ छं० ॥ ६६[illegible] ॥

३३४ पाठान्तर-परी। सौमेष। बंसी। हय गय। गजदिंता झननंकंतः। टोक। बिकूरंत। षग। भगंत। रननंकित। रननंकंत। रस सुर। वीर। समुंह वीर। विहाइया। निहाईया। संभरी। लंग्गे। लग्गों। उचाईया उचारिया ॥

* संगीत शास्त्रवेत्ता और अन्य सब को स्मरण में रखने की बात है कि संगीत के आचार्य भरत जो सिंधू राग को वीर रस में मानते हैं उसका प्रचार इस समय तक पाया जाता है अर्थात् लड़ाई में सिन्धु राग गाया और बजाया जाता था और व्यूह रच के लड़ना भी पृथ्वीराजजी के समय तक प्रचलित रहा है ॥

३३५ पाठान्तर-उचाय। लोह। व्योम। योम। थांन। मांने। मनों। हरि। हरी बलि बलन बानं। हरीय। बांन। जुंट्टो। जुटो। जुटो। मझ। जाय। मांनों। मांना। जुथ। पाय। इनि। बिध। विधि। सोम। मिलि। लोह। पुर। रीठु। मती। बांन। श्रूरा। हलि। मिलिग। बे बाह। बरसे। यज्जंठ। मांचत। जुटंत। सिंदुं। मेघ। घातय। घायु। वहंत। नद। नारद्र। डक।

तिन मुष्ष सोम मिल्ल चाहुवान । मांनों कि रिष्षि दरिया असान ॥
तिन सीस बज्जि धारा निहाय । घरियार बज्जि मनुं वज्ज घाय ॥ छं० ॥ ६६३ ॥
परि सोम सूर अरि बधिय जंग । चैासट्ठि घाय बेध्यौ सु अंग ॥
तिन अग्ग परिग पहु मान वीर । छिन भिन्न होय धारा सरीर ॥ छं० ॥ ६६४ ॥
सत पंच परिग है गै कहूर । सैं पंच दून परि पित्त सूर ॥
सहसं च पंच कमधज्ज सेन । जीतैा अनंद सुत बीर सेन ॥ छं० ॥ ६६५ ॥
भाजंत सेन वर विजैराज । है गै बीर रिन छोरि लाज ॥
पलकंत श्रोन धर चल्लिग षल । कैातिग देव घर रुंड माल ॥ छं० ॥ ६६६ ॥
पल चरन चार वर रंभ कीन । जै जथा सद्द बंदीन दीन ॥ ६६७ ॥ रू० ॥ ३३५ ॥

सोमेश्वरजी का दिल्ली में बड़ा साहस करना ॥

कवित्त ॥ दिल्ली वै सोमेस । कियैा साहस चहुवानं ॥
सो कमधज्ज नरिंद । बीर विजपाल भगानं ।
अजरां परि अजमेर । मान बंधव परि चड्डुं ॥
अस्त्र वस्त्र अरु चर्मे । टंक लभ्भैं नन चड्डुं ।
रघुवंस बीर दिष्यैा निजरि । पहु पंचिनिय रुडाइयां * ॥
अप मंस अप्प कर कट्टि कैं । चील्हां हंकि उडाइयां * ॥
छं० ॥ ६६८ ॥ रू० ॥ ३३६ ।

डरांन । सिद्धुनीय । थांन । फूंल । दुत्थ । मय । फूल । सेन । अनंगपाल । हरय । हरीय । पंड । पेड । जाय । फिरि । मतो । मुष । सैाम । मिलि । चाहुवांन । मांनो । रिषि । दरयायसांन । घरीयार । मनुं । मनो । घरीयार मनैां । वज्जि । वज्जे । सैाम । जग । चोसठि । वैध्यो । अग । परिम । पहु मांन । होइ । शरीर । गैं । गहर । से । सुर । सहसच । परिकमध । जीतो सु जंग सुत बीर सैन । जीतो सु जंम सुत बीर सेन । हय गय । कैातिग । चारु । वरं । जे जे जु सट्ट । जै जै जु सद्द ॥

* ऐसे प्रयोगों को देखकर के राजपूताने के कवियों को भ्रम के वश न हो जाना चाहिये क्योंकि वे कवि की मातृभाषा पंजाबी होने के कारण प्रयोग हुए हैं और राजपूताने की भाषा में बहुत से पंजाबी शब्द भी मिले हुए हैं तथा राजपूताने की भाषा कोई स्वतंत्र भाषा नहीं है किन्तु भील और मेर आदि और जो जो क्षत्री और कवि आदि जिस जिस प्रान्त से इस देश में आकर बसे हैं उन सब की भाषाओं से मिलकर बनी हुई एक खिचड़ी है ॥

३३६ पाठान्तर-दिली । ढिल्ली । वे । सोमेस । चहुवांनं । कंमधिज्ज । नरेंद । विजैपाल । मांन । परचंहुं । परंचडुं । अस्ति । वस्तिं । अरु चर्मः । चर्म्मे । बिर । पंचैनिय । पंचिनि । अप । मस । कठि । कै । कें । चिल्हां हक्कि । हांक ॥

कमधज्ज का पराजित हो घर जाना और सोमेस का अजमेर को चलना ॥

दूहा ॥ जित्ति भत्ति भारथ्थ भौ। गौ फिरि ग्रह कमधज्ज ॥
उप्पारे अजमेर पहुं। डोला पंच सुरज्ज ॥ छं० ॥ ६६८ ॥ रू० ॥ ३३७ ॥

अनंगपाल जी का सोमेश्वर जी को कन्यादान करना ॥

कवित्त ॥ अनग तूंअर नरिंद। ध्रम्म मंड्यो उछंग बर ॥
सुभ सोमेस नरिंद। ग्रहन पानिंग मंडि कर ॥
हेम हय गय भार। दासि दीनी सु पंच सय ॥
सत हस्ती है सहस। अथ्थ अप्पौ सु देस लय ॥
हिंसार को षहर विहर। मुत्ती माल सुरंग घन ॥
चल्यौ नरिंद अजमेर दिसि। बलि नरिंद इक बंध मन ॥
छं० ॥ ६७० ॥ रू० ॥ ३३८ ॥

सोमेश्वरजी का अजमेर आना और वहां बड़ा उत्सव होना ॥

कवित्त ॥ शृंगारिय गजराज। आय ग्रिह जीतिव जानय
पहिराइन परिवार। जानि रिति माधव मानिय ॥
बाल वृद्ध जुब्बनह। मुष ग्गावत अति मंगल ॥
रुचि रुचि विविध बचन्न। परसपर जानि सुष्ष गल्ल ॥
तह अंब गौष तारुन चि।विध। सषिय गौष उभ्भिय सरस ॥
प्रतिबिंब मुष्ष राका दरस। मुह गावत चहुआन जस ॥
छं० ॥ ६७१ ॥ रू० ॥ ३३९ ॥

---

३३७ पाठान्तर-जिति। भिति। भारथ। भय। गय। ग्रिह। कम धज। डोला सुरज ॥

३३८ पाठान्तर-अनंगयाल। तुंबर। शुभ। सैामेस। पंनिग। मडि। हैन हय गय। ज। सित। हथी। हय। हय। सुं। देवसलय। कैाट। ष्षचर। षचर बिहार। मुत्ति। मुत्तिय। दिशि। बल ॥

३३९ पाठान्तर-शृंगारीय। ग्रिह। वृद्ध। जीतिब। पारिवार। जांनि। मांनिय। बुद्धि। जुंवनह। मुष गावत। मुंष्षि गावत। विविधि चवनं। जांनि। सु पिंगल। तारुनि। त्रिविधि। सषीय। गैाषि। उभीय। प्रति बिब मुष्क रांका दरसन। प्रतिब्यंब। मुष चहुंवांन। चहुवान। चहुआंन ॥

पृथ्वीराजजी की कथा का आरंम्भ करना ॥

पद्धरी ॥ अब कहौं कथ्य चहुआन राइ । जिम लई भूमि षल षग्ग धाई ॥
जिम अनग राज दिल्ली दान । बषनैंत बलिय कुल चाहुवान ॥ छं० ॥ ६१२ ॥
जिम अगम द्रुग्ग गढ लए कूटि । जिहि क्त्ति कित्ति जिति संसार लूटि ॥
जिम मेछ्छ सेन षग धार षंडि । कै बार साहि जिन बंधि छंडि ॥ छं० ॥ ६१३ ॥
जिम कमध सेन घर धरिय कीन । विध्वंसि जग्ग संयोगि लीन ॥
अब्बुआ राव रष्यौ बलेस । चालुक्क भंजि पट्टन नरेस ॥ छं० ॥ ६१४ ॥
परिहार सिंघ जिम जेर कीन । बरनी विवाहि रस बसि अधीन ॥
देवगिरद्रुग्ग द्वै षुरनि गाहि । बालुका जीति दै जग्य धाहि ॥ छं० ॥ ६१५ ॥
रिनथंभ द्रुग्ग जद्दव नरेस । कंन्या विवाहि तिन रष्षि देस ॥
भंजे मै वास बहु भील कंक । भर नीर ग्रेह तिन कढ्ढि बंक ॥ छं० ॥ ६१६ ॥
अनमी मसंद तिन नाम बारि । जुगवंत जीव म्रूरष गवार ॥
अवतार अप्प करतार होइ । हूओ न और ह्वै है न कोइ ॥ छं० ॥ ६१७ ॥
अजमेर द्रुग्ग न्रप सोम राइ । अदभूत तेज अरि धरन लाइ ॥
दिल्लिय अनंग तोंअर नरिंद । अनसंक कंक पहुमीस इंद ॥ छं० ॥ ६१८ ॥
तिह सुत्त नांहि ग्रह पुत्ति दोय । किय व्याह कमधं चहुआन सोई ॥
छं० ॥ ६१९ ॥ रू० ॥ ३४० ॥

सोमेश्वरजी का तेज बल से तपना ॥

कवित्त ॥ तपै तेज चहुआंन । सूर सोमेस अप्प बल ॥
तिन सु तेज तरवारि । मुक्क अरु सुक्क मुष्य जल ॥

---

३४० पाठान्तर-कहों । कहो । कथ्य । चहुवांन राय । लइ । षगा । षय । धाय । अनंग । दिलि दां दांन । बषतैत । बषनैंति । चाहुवांन । द्रुगां । द्रुंगा । जुट्टि । जिंहि । क्रिति । जिति । लुट्टि । लुंटि । जिन । मेछ । मेछि । षिड । के । जिन । कमंध । सैन । धर धरीव किंव । धरधरी । धीर । कींव । जिग्य । जिग्य । संजोगि । लिव । लींव । अवुंग्रा । आंबूग्रा । जिन । जेर । किंन । देवगिरि । हे । गाहि । दे । धाह । थःम । द्रुग । दुंग । जदेव । कन्यां । रषि । भंजे । मेवास । मिवास । भरें । ग्रेह । कढि । नांम । जुंगवत । क्रिरतार । सोइ । हूंओ । हूउन । हुहे । हू हैं । कीय । दुग । द्रुंग । नृप । सोंम । धरन । दिलिय । दिल्लीय । तुंवर । पहुवींस । पुहवीस । तिहिं । सुत । यिह । ग्रह । पुत्री । चहुंवांन । चहुआंन । सोय ॥

सुभट भाट संग थान। चित्त चारन चतुरंगम॥
जहँ तहँ लक्छि निवास। सु बसि बिलसंत सुरंगम॥
सुनिये न पर श्रवन चक्क भय। सुजस सकल जंपै जगत॥
मानिक्क राइ कुल उद्धरन। सोम षलनि जहँ तहँ षगत॥
छं० ॥ ६८० ॥ रू० ॥ ३४१ ॥

अनंगपालजी का अपनी दो पुत्रियों में से सुन्दरी विजैपालजी को और कमला सोमेश्वर जी को प्रदान करना ॥

दूहा ॥ अनग पाल पुत्री उभय। इक दीनी विजपाल॥
इक दीनी सोमेस कौं। बीज बवन कलि काल * ॥
छं० ॥ ६८१ ॥ रू० ॥ ३४२ ॥

एक नाम सुर सुंदरी। अनि वर कमला नाम॥
दरसन सुर नर दुल्लही। मनों सु कलिका काम॥
छं० ॥ ६८२ ॥ रू० ॥ ३४३ ॥

जिन दिन सोमेस का विवाह हुआ उस दिन क्या क्या हुआ ॥

कवित्त ॥ ज दिनै व्याहि सोमेस। त दिन अमरन मन उहित॥
त दिन बीर बेताल। काल कलहागम कुहित॥
त दिन अवनि उमर्छीय। पुत्र इच्छि भार उतारै॥
छत्र तेज छित छज्जि। देव दानव पु'तारै॥

३४१ पाठान्तर-तपे। चहुआंन। चहुवांन। मुछ। मुंछ। अछ। मुप। सुभट थाट संग। भाट चित्त चोरन चतुरंगम। जहां तहां। जिहां तिहां। जह। तह। लछि। बंशि। सुनीये। जंपे। मानिक। कुंल। षलन। जिहां। जह। तह॥

३४२-३ पाठान्तर-अनंगपाल। दिनी। विजेपाल। विजैचंद। सोमेस। चिप वपुन। चाल। दंद ॥ ३३२ ॥ नांम। सूर सूंदरी। सुदरी। बीअ कहेला वर नांम। वे। अनि वर मलया नांम। दुल। मनौं। सुं कांम ॥ ३४३ ॥

* चंद कवि का यह वाक्य "बीज बवन कलि काल,, हमारे पाठकों के ध्यान देकर समझने योग्य है कि यद्यपि चंद सोमेश्वर जी के घर का कविराज था परन्तु वह कैसा यथार्थ वक्ता था। क्या आजभी कोई कवि अथवा कविराज ऐसां स्पष्ट कह अथवा लिख सकता है ?

ता दिन सु सार सज्या समह । भ्रम अंतर कायर कपे ॥
मानिक्क राइ अनगेस घर । पानि ग्रहन ज दिन थपे ॥
छं० ॥ ६८३ ॥ रू० ॥ ३४४ ॥

सोमेश्वरजी की रानी के गर्भ रहना और उसका प्रतिदिन बढ़ना ॥

कवित्त ॥ किनिक दिवस अंतरह । रहिय आधान रानि उर ॥
दिन दिन कला वढंत । मेघ ज्यों बढत भद्द धुर ॥
चंद्र कला सित पष्य । जेम बाढंत दिनं दिन ॥
मुगधा जोवन चढत । मिलत भरतार षिनंषिन ॥
उद्दित अधान सुभ गातनह । जेम जलधि पुन्निम बढहि ॥
हुलसंत हीय जे प्रीय चिय । जिम सु जोति जनिता चढहि ॥
छं० ॥ ६८४ ॥ रू० ॥ ३४५ ॥

सोमेश्वरजी की तुंअरि रानी का पृथ्वीराजजी को जनना ॥

दूहा ॥ सोमेसर तोंअर घरनि । अनगपाल पुत्रीय ॥
तिन सु पिथ्थ गर्भं धरिय । दानव कुल छत्रीय ॥
छं० ॥ ६८५ ॥ रू० ॥ ३४६ ॥

सोमेसजी के प्रथम पुत्र का ढुंढा के वर से होना स्मरण कर गंधर्वादि का प्रसन्न होना और उत्सव मानना ॥

कवित्त ॥ प्रंथम पुत्र सोमेस । गंधपुर ढुंढा गड्डिय ॥
भई सुद्धि गंध्रवन । पुहप मंगल दुज पढ्ढिय ॥
अद्ध रैनि अनु जानि । लिखी बालक सिर सिद्धिय ॥
गयन बयन घन सद्द । युद्ध जीवन जय दिड्डिय ॥

३४४ पाठान्तर-व्याह । सोमेस । ता । अमरत । अमरंत । उदित । काम । कल[illegible]गम कुदित । उंमहिय । उमहिय । नाथ मोहि भार उतारै । तेज । छिति । छजि दिव वांनव्वि पुंतारै । पै । दीन कहुं दवि पुतारै । कपीय । कंपीय । मानिक । राय । अनगैस । ज दिन । थपिय । थपीय । थपै ॥

३४५ पाठान्तर-कितक । आधांन । रांनि । ज्यों मेघ बढंत भद्द धुर । ज्यो । ज्यों मेघ बढ्ढंत भद्द धुर । पष । पषि । जैम । यौवन । षिन षिनं । षिनि षन । गदित अधान सुभगतनह । जैम । पूनिम । पूंनिम । हुंलसंत । जै । त्रीय । ज्यौति ॥

३४६ पाठान्तर-सोमेशर । तुंअर । गम्भ पियं । पिथ्य । छित्रीय ॥

सिन सुभट सूर कह सथ्थ चलि। चंद भट्ट कीरति करन॥
संजोगि जोति तप राषि सन। वरष तीस दसह बरन॥
छं० ॥ ६८६ ॥ रू० ॥ ३४७ ॥

कवित्त ॥ बन तापस तप तपिय। आप बीसल सिर धारिय॥
बरष असी तीन सै। गुहा ढिल्ली ढिग तारिय॥ †
सिन अंजर रजनीय। पुरनि गंध्रव पग धारिय॥ †
* * * * * *
अवतार लियौ प्रिथिराज पहु। ता दिन दान अनंत दिय॥
कनवज्ज देस गज्जन पटन। किलकिलंत कालंकनिय॥
छं० ॥ ६८७ ॥ रू० ॥ ३४८ ॥

जिस दिन पृथ्वीराजजी का जन्म हुआ उस दिन देशान्तरों में क्या क्या हुआ॥

कवित्त ॥ ज दिन जनम प्रिथिराज। षरिग बत्तह कनवज्जह॥
ज दिन जनम प्रिथिराज। त दिन गज्जन पुर भज्जह॥
ज दिन जनम प्रिथिराज। त दिन पट्टन वै सड्डिय॥
ज द्दिन जनम प्रथिराज। त दिन मन कालन षड्डिय॥
ज दिन जनम प्रथिराज भौ। त दिन भार धर उत्तरिय॥
बतरीय अंस अंसन ब्रहम। रही जुगें जुग बत्तरिय॥
छं० ॥ ६८८ ॥ रू० ॥ ३४९ ॥

३४७ पाठान्तर-सोमैस। गथपुर। ढुंढां धारीय। भइ मुद्दि गंध्रवन। गंधृवन। पढिय। रैंन। रेनि। जांनि। लयौ। लीयो। वालिक। वालक। सुर। सड्डिय। गैंन वैंन। घसद्द। गैंन। वैंन घन सद। सुद्दु जोपीन जय दिट्ठीय। सतं। सुर। जैाति। सन॥

† ये दोनों तुक सं० १८४५ की पुस्तक में नहीं हैं॥

* यह तुक हमारे पास की किसी भी पुस्तक में नहीं है॥

३४८ पाठान्तर-वलि। सिल। धारीय। रंजनिय। गंधृव। धारीय। लीयौ। प्रिथीराज। दांन। कनवज। देसं। गजन। पटन। पट्टन। किलकंलं। कालक नीय॥

३४९ पाठान्तर-दिनि। जनमि। प्रिथीराज। परिग वत्तह कनवजह। जनमी। गंजन पुर भंजन। गजन पुर भजह। जा। ता। वे। सट्टीय। जनमी। ता। जनिमि। भय। जद्दिन जनंम प्रथिराज भुअ। भुय। ता। उतरिय। अवतरिय। अवतरीय। जुगे। जुग। वतरीय॥

अनंगपालजी का अपनी पुत्री के पुत्र को देखना और उत्सव करना ॥

कवित्त ॥ अनग पुहवै नरेस। व्यास जग जोति बुलाइय ॥
लगन लिद्धि अनुजा सुत। नाम चिहु चक्क चलाइय ॥
पुप्फ पानि धरि धूप। पिथ्य पाइन दो अंसह ॥
कलि अवतार कुलाह। अंसपति पारन कंसह ॥
बहु जुद्ध रुद्ध कलि जुग्ग बर। खित्त सित्त दैनन भिरन ॥
कवि चंद दिखी यह कारने। इह अपुब्ब अवतार लिन ॥
छं० ॥ ६८९ ॥ रू० ॥ ३५० ॥

पुत्री पुत्र उछाह। दान मानह घन दिद्धिय ॥
धाम २ * गावत धमारि। मनहु अद्दि बन मनि लिद्धिय ॥
कनवज जैचंद मात। भयौ संभरि बहनी सुत ॥
तिन पवंन दुज पठिय। थार जर चीर थपिय थुत ॥
पहिराइ परीघह दान दुज। किय समाप सब्बन बिथरि ॥
दस दिवस रष्षि अप्पन अबर। अति उछाह आनंद करि ॥
छं० ॥ ६९० ॥ रू० ॥ ३५१ ॥

---

* इस को कोई नई बात नहीं समझना चाहिये किन्तु बहुत पुरानी रीति है कि काव्य में जहां शब्द दो वार प्रयोग होता है और दो वार उस का पृथक् २ प्रयोग करने से छंद टूटता हो तो उस को एक वार लिख कर उसके आगे २ का अंक कर देते हैं और उस से अभिप्राय यह रहता है कि उसको गद्य में करने के समय अथवा उसका अर्थ करते समय उस शब्द को दो वार प्रयोग कर लेना कि उसके गौरव का नाश न हो जाय। ऐसे प्रयोग प्राचीन कवियों के काव्यों में आते हैं परंतु अब लोगों ने उनके स्थानों में नये पाठ धर दिये हैं और इस सूक्ष्म कारण पर ध्यान नहीं दिया है। किन्तु गद्य में तो अब तक यह रीति भले प्रकार प्रचलित है ॥

३५०–५१ पाठान्तर-अनंगपाल। पुहवी। योति। बुलाईय। लिद्ध। दिद्ध। सु। त्तनि। नांम चिहुं चक्र चलाइय चलाईय। पुष्फ पांनि। पिथ। यायन। दो। असह। कुलांह। असपति. वहुं। जुंद्ध। जुंगा। जुग। भ्यत। खित सित। देनन। भिरिय। करत इह अपूरव अवतार लीय। अपुवः ॥ ३५० ॥ दांन। मांन दिद्धीय। धांम धांम। धमारि। मनहुं अदि बंत मनि लद्धीय। कनवजह। कनवज्जह। जैचंद। जेचंद। पिता बहिनी सुतनी सुत। तिम। यवंग। दुजि। पठीय। थपीय। थुति। श्रुति। पहिराय। परिगाह। परिगह। दांन। कीय। ज्येमाव। समाष। सवन। बिथर। दिस। रषि। अपन ॥

पृथ्वीराजजी का जन्म होना सुन कर सोमेसजी का उत्सव करना॥

दूहा॥ सुनि सोमेस वधाइ दिय। है गै चीर गुराव॥
अति उछाह अनंद भरि। न्रप मुष चढ्ढिय आव॥
छं०॥ ६९१॥ रू०॥ ३५२॥

सोमेसजी का पृथ्वीराजजी को अपने घर लाने को कहना॥

दूहा। तब बुलाय सोमेस बर। लौहानौ अरु चंद॥
लै आवहु अजमेर धर। पद्दौनै घरह सु इंद॥
छं०॥ ६९२॥ रू०॥ ३५३॥

सोमेसजी का पृथ्वीराजजी को अजमेर ले आना॥

दूहा॥ करि आनौ * उछ्छाह किय। चल्लिय राज अजमेर॥
सहस बाजि है सुभर बर। सत्त सषी मनि मेर॥
छं०॥ ६९३॥ रू०॥ ३५४॥

पृथ्वीराजजी का जन्म संवत् और उनके प्रागट्य का हेतु॥

दूहा॥ एकादस सै पंच दह। विक्रम साक अनंद॥
तिहि रिपु जय पुर हरन कौं। भय प्रिथिराज नरिंद॥
छं०॥ ६९४॥ रू०॥ ३५५॥

पथ्वीराजजी के शक की संज्ञा का सूत्ररूप कवि का वाक्य॥

दूहा॥ एकादस सै पंच दह †। विक्रम जिम ध्रमसुत्त॥
चलिय साक प्रथिराज कौ। लिष्यौ विप्र गुन गुप्त॥
छं०॥ ६९५॥ रू०॥ ३५६॥

---

३५३ पाठान्तर-दीय। हे। गे। वीर। भर। मुंष। चढिय। आव॥
३५३ पाठान्तर-चलाय। सोमेस। लोहंनो। पुर गजब अति आसनह। महन तथ कवि
चंद पुर गज्जन अति हरि आसनह। पुहन तथ कवि चंद। आवहु। घर।
* स्त्री को उसका पति अथवा पति के सगे संबन्धी आदि उसके पिता के घर से अपने
घर लाते हैं वह आना अथवा आनो कहलाता है॥
३५४ पाठान्तर-उछाह। कीय। चलीय। हे। वर सत। मति। मेर॥
३५५ पाठान्तर-एकादस। से। सें। शाक। तिह रिपु पुर जय हरन कों। हुंअ। हुय।
भे। पृथ्वीराज॥ बूंदीवाली सं० १८४५ की पुस्तक में इसके स्थान में ३५६ रूपक है और उस के
स्थान में यह है॥
†इसकी पहिली आधा तुक का पाठ हमारे पास की सब पुस्तकों में "एकदस समयै सु
कृत" करके है किन्तु जो हमने रक्खा है वह बूंदी राज की पुस्तक से उद्धृत किया है।
३५६-पाठान्तर-एकादस। समत्रे। समये। ध्रंम। सुत। त्रीयथि। त्रीयनि। शाक।
पृथीराज। प्रिथीराज। कों॥

इन रूपक ३५५ और ३५६ पर हम यह टिप्पण अत्यन्त आनन्द के साथ लिखकर हिन्दी
भाषा के महा कवि चंद बरदाई की संवत् संबन्धी बड़ी कठिनता के इस शोध को पुरातत्व
वेत्ताओं की सेवा में भले प्रकार विचार करने को उपस्थित करते हैं । यद्यपि हमारे ज्यौतिष
शास्त्रादि के अच्छे अच्छे विद्वान इष्ट मित्रों में से कितनेक महाशय कि जिनको यह शोध विदित
हो गया है हमको First discovery प्रथम शोध करने का मान देते हैं किन्तु हम उनकी परम
प्रीति और न्याय बुद्धि के साथ गुण ग्राहकता के लिये अत्यन्त आभारी होकर यह कहते
हैं कि जब अन्य पुरातत्ववेत्ता विद्वान् भी हमारे इस शोध को उसके गुण दोषों का अन्वेषण
करके स्वीकार करैंगे तब हम अपने को सर्वरीत्या कृत कृत्य समझेंगे ।

अब आप चंद की संवत् संबन्धी कठिनता को इस प्रकार से समझने का प्रयत्न करें कि
प्रथम तो रूपक ३५५ को बहुत ध्यान देकर पढ़ैं । तदनन्तर उसका अन्वय करके यह अर्थ करैं कि
[एकादस से पंचदह] ग्यारह से पंदरह [अनन्द विक्रम साक अथवा विक्रम अनन्द साक] अनन्द
विक्रम का साक अथवा विक्रम का अनन्द साक [तिहि] कि जिसमें [रिपुजय] शत्रुओं को विजय
करने [पुरहरन] और नगर अथवा देश देशान्तरों को हरन करने [को] को [प्रिथिराज नरिंद]
पृथ्वीराज नामक नरेंद्र [भय] उत्पन्न हुए ॥

तदनन्तर इसके प्रत्येक शब्द और वाक्यखंड पर सूक्ष्म दृष्टि देकर अन्वेषण करैं कि उसमें चंद
की (Archaic style)प्राचीन गूढ भाषा होने के कारण संवत् संबन्धी कठिनता कहां और क्या घुसी
हुई है । कवि के प्रतिकूल नहीं किन्तु अनुकूल विचार करने पर आपकी न्याय-बुद्धि झट खोज
कर पकड़ लावेगी कि विक्रम साक अनन्द वाक्यखंड में-और उसमें भी अनन्द शब्द में हम लोगों
को इतने वर्षों से गड़बड़ा कर भ्रमा रखनेवाली चंद की लाघवता भरी हुई है । इतनी जड़ हाथ
में आ जाने पर अनन्द शब्द के अर्थ की गहराई को ध्यान में लेकर पक्षपात रहित विचार से
निश्चय कीजिये कि यहां चंद ने उसका क्या अर्थ माना है । निदान आपको समझ पड़ेगा कि
अनन्द शब्द का अर्थ यहां चंद ने केवल नव-संख्या-रहित का रक्खा है अर्थात् अ=रहित और
नन्द=नव ९ । अब विक्रम साक अनन्द को क्रम से अनन्द बिक्रम साक अथवा विक्रम अनन्द साक करके
उसका अर्थ करो कि नव-रहित विक्रम का शक अथवा विक्रम का नव-रहित शक अर्थात् १००-९=
९० । ९१ अर्थात् विक्रम का वह शक कि जो उसके राज्य के वर्ष ९० । ९१ से प्रारंभ हुआ है । यहीं
थोड़ी सी और उत्पेक्षा करके यह भी समझ लीजिये कि हमारे देश के ज्योतिषी लोग जो सैकड़ों
वर्षों से यह कहते चले आते हैं और अब भी वृद्ध लोग कहते हैं कि विक्रम के दो संवत् थे कि
जिनमें से एक तो अब तक प्रचलित है और दूसरा कुछ समय तक प्रचलित रहकर अब अप्रचलित
होगया है । और हमने भी जो कुछ इस के विषय की विशेष दंतकथा कोटा राज्य के विद्वान
कविराज श्री चंडीदानजी से सुनी थी वह इस महाकाव्य की संरक्षा में जैसी की तैसी लिख
दी है अतएव विदित हो कि विक्रम के दो संवत् हैं । एक तो सनन्द जो आज कल प्रचलित
है और दूसरा अनन्द जो इस महाकाव्य में प्रयोग में आया है । इसी के साथ इतना यहां का
यहां और भी अन्वेषण कर लीजिये कि हमारे शोध के अनुसार जो ९० । ९१ वर्ष का अंतर उक्त
दोनों संवतों का प्रत्यक्ष हुआ है उसके अनुसार इस महाकाव्य के संवत् मिलते हैं कि नहीं । पाठकों
को विशेष श्रम न पड़े अतएव हम स्वयम् नीचे के कोष्टक में कुछ संवतों को सिद्ध कर दिखाते हैं-

पृथ्वीराजरासे के अनन्द संवतों का कोष्टक ।

पृथ्वीराजजी का	रासो में लिखे अनन्द संवत् में	सनन्द और अनन्द संवतों का अंतर जोड़ो	यह सनन्द संवत् हुआ उस में	पृथ्वीराजजी की शेष वय जोड़ो	परीक्षा के लिये अंतिम लड़ाई का सिद्ध संवत्
जन्म	११९५	९० । ९१	१२०५ । ६	४३	१२४८ । ९
दिल्ली गोदजाना	११२२ *	९० । ९१	१२१२ । ३	३६	१२४८ । ९
कैमास जुद्ध	११४०	९० । ९१	१२३० । १	१८	१२४८ । ९
कन्नौज जाना	११५१	९० । ९१	१२४१ । २	७	१२४८ । ९
अंतिम लड़ाई	११५८	९० । ९१	१२४८ । ९	०	१२४८ । ९

जो कुछ हमने यहां तक कहा है उससे और सब बातें तो हमारे पाठकों के मन में बैठ
गई होंगी किन्तु ३५५ रूपक में जो अनन्द शब्द प्रयोग हुआ है उसमें किसी किसी को कुछ संदेह
रहेगा ; अतएव हम फिर उसके विषय में कुछ अधिक कहते हैं । देखो संशय करना कोई बुरी
बात नहीं है किन्तु वह सिद्धान्त का मूल है । हमारे गैातम ऋषि ने अपने न्याय-दर्शन में प्रमाण
और प्रमेय के पीछे संशय को एक पदार्थ माना है और उसके दूर करने के लिये ही माने सब
न्यायशास्त्र रचा गया है । यदि **आनन्द** का नव-संख्या-रहित का अर्थ किसी की सम्मति में ठीक
नहीं जंचता हो तो उससे इस स्थल में बहुत अच्छी तरह घटता हुआ कोई दूसरा अर्थ बतलाना
चाहिये। परंतु बात-तब है कि वह सर्वतंत्र सिद्धान्त(universally true)से उसी तरह सिद्ध हो सकता
हो कि जैसे हमने यहां अपना विचार सिद्ध कर दिखाया है । सब लोग जानते हैं कि हमारे इस
शोध के पहिले तक युवा और मध्य वय के कोई कोई कवि लोग इस अनन्द संज्ञा वाचक शब्द का गुण
अर्थ शुभ (auspicious)का करते रहे हैं और चारण जाति के महामहोपाध्याय कविराज श्रीश्यामलदासजी
ने भी अपने इस महाकाव्य के खंडन-ग्रंथ में यही अर्थ माना है । परंतु विद्वानों के विचारने और
न्याय करने का स्थल है कि इस दोहे में आनन्द पाठ नहीं है और न चंद के लक्षण के अनुसार वह बन
सकता है किन्तु स्पष्ट अनन्द पाठ है । यदि तहां संज्ञा वाचक आनन्द पाठ भी होता तो भी उसका गुण
वाचक शुभ का अर्थ नहीं हो सकता था परंतु संस्कृत भाषा का थोड़ासा ज्ञान रखनेवाला भी यह जान
सकता है अथवा जिनके पास संस्कृत भाषा के कोशों की पुस्तकें हैं वे उनके बल से भी जान सकते हैं कि
वाचस्पत्यबृहत् संस्कृताभिधान के पृष्ट १४९ और शब्दार्थचिंतामणि के पृष्ठ ६९ में स्पष्ट अनन्द के
यह अर्थ लिखे हैं कि "त्रि० न नन्दयति नन्द, आनन्दयितृभिन्ने, अनानन्दे असुखे" इत्यादि। देखो जब
अनन्द शब्द का सत्य अर्थ दुःख का है तो फिर क्या सुख और शुभ का अर्थ करना अयोग्य नहीं है ।
यदि कवि लोग जैसे अलंकार और नायका भेद की सूक्ष्मता जान लेने के लिये परिश्रम करते हैं वैसे ही
जो सूक्ष्म दृष्टि देकर देखते तो झट जान लेते कि यहां कवि गूढ़ार्थ में संवत् का भेद बता रहा

* यह संवत् हमने पृथ्वीराजजी के जो परवाने हमको मिले हैं उनकी छाप में लिखा हुआ है उनसे ग्रहण
किया है किन्तु रासो की अब तक प्राप्त हुई पुस्तकों में तो किसी में ११३८ और किसी में ११२८ लिखा मिलता है ॥

है और **सुख** अथवा **दुःख** और **शुभ** अथवा **अशुभ** के स्थूल अर्थों को प्रयोग में नहीं लेता है। अब व्याकरण शास्त्र की रीति से भी **आनन्द** और **अनन्द** शब्दों की प्रयोग सिद्धी में अन्तर है। अब हमारे अर्थ की पुष्टि में विचार कीजिये–

१ प्रथम तो विचार करने के पहिले ऐसे ऐसे दुराग्रहों से अपने अपने हृदय को अपवित्र नहीं कर रखना चाहिये कि चन्द ऐसा मूर्ख था कि उसे अनुस्वार और विसर्ग तक का ज्ञान न था और न वह संस्कृतादि किसी भाषा में व्युत्पन्न पंडित था और जितनी भूलें इस महाकाव्य में मिलती है वह सब उसने ही की हैं ॥

२ दूसरे देखो कि कवि यहां विक्रम के शक की संख्या के विशेषण में **अनन्द** शब्द का प्रयोग करता है और तहां संख्या वाचक अर्थ का ही प्रसंग है। और इस बात की भी कुछ अत्याव-श्यकता नहीं है कि हम यहां **अनन्द** को **आनन्द** का अपभ्रंश आदि समझकर **शुभ** का ही अर्थ करें क्योंकि कवि इस के साथ ही रूपक ३५६ में स्पष्ट **"तृतीय साक पृथिराज कौं लिख्यौ"** कहता है। और संज्ञा वाचक **आनन्द** का अपभ्रंश रूप **अनन्द** कि जो तथापि संज्ञा वाचक ही होगा, उसका गुण वाचक अर्थ **शुभ** (auspicious) कदापि नहीं बन सकता ॥

३ तीसरे इस स्थल के प्रसंग से **अनन्द** शब्द को अ + **नन्द** से बना मानना चाहिये। और **अ** का यहां **रहित** अर्थ करने के लिये इस श्लोक को प्रमाण में लेना चाहिये :-**तत्सादृश्यमभावश्च, तदन्यत्वं तदल्पता। अप्राशस्त्यं विरोधश्च नञर्थाः षट् प्रकीर्त्तिताः"**॥ और **नन्द** के नव संख्या वाचिक अर्थ के ग्रहण करने को वैसे ही समझैं तो ऋषि शब्द ७ सात के वाचक की भांति **"नव नन्दा भविष्यन्ति-चाणक्यो यान् हनिष्यति'** स्कं॰ पु॰। तथा श्रीधर स्वामी कृत भागवत की टीका में **तेषां सपुत्राणां नवसंख्यत्वेन तत्तुल्य संख्या"** के अर्थ स्पष्ट ही हैं अतएव अधिक प्रमाण नहीं लिखते हैं ॥

४ चौथे चन्द का अनन्द शब्द प्रयोग करने से उस का यह आन्तरीय अभिप्राय होना ज्ञात होता है कि विक्रम का जो प्रचलित संवत् है उसकी मूल संख्या में संकर राजा नन्द का कुछ समय मिला हुआ है अर्थात् वह संवत् जिस गणित के अनुसार है वह उक्त नन्द के समय सहित थी और चन्द ने जिस प्रकार से काल निरूपण किया है वह नन्द के समय रहित है अर्थात् चन्द का लिखा विक्रमी संवत् शुद्ध विक्रमी है। इसी लिये हमने इन दोनों संवतों को **अनन्द** और **सनन्द** नामों से इस टिप्पण भर में ग्रहण किया है। यदि कोई मनुष्य यह हठ कर बैठे कि हमको चन्द का अनन्द संवत् केवल प्रत्यक्ष प्रमाणों से ही सिद्ध कर दिखाओ तो क्या यह हमारा उसको उत्तर देना अन्यथा होगा कि जिस प्रमाण रूप प्रचलित विक्रमी संवत् की अपेक्षा से तुम चन्द के लिखे **अनन्द** संवत् रूपी प्रमेय को सिद्ध करना चाहते हो तो प्रथम तुम अपने प्रमाण को वैसे ही प्रत्यक्ष प्रमाणों से निर्दोषी सिद्ध कर दिखाओ तो फिर हम उसको प्रमाण रूप मानकर चन्द के **अनन्द** संवत् रूपी प्रमेय को सिद्ध कर उसकी अशुद्धता समझ लें; क्योंकि यह दावा तुम्हारा है कि चन्द का लिखा संवत् अशुद्ध है। अतएव वादी के करने का काम हम ही करके प्रचलित विक्रमी संवत् की सत्यता की परीक्षा करते हैं। परीक्षा करने के पहिले एक यह सिद्ध हुई बात स्मरण कर लेनी चाहिये कि आज तक सर विलियम् जोन्स, मिस्टर सैम्यूएल डेविस, कोलब्रुक, बेंटली, हाल, लेसन, डाक्टर भाऊ दाजी, बुलर, ह्विटनी, अलबीरूनी, डाक्टर हंटर और डाक्टर कर्ण आदि ने जो जो शोध बड़े बड़े परिश्रम से विक्रमादित्यजी का ठीक समय निश्चय करने के लिये कई एक प्रकारों से अर्थात् विक्रमादित्यजी के समकालीन राजा और ग्रंथकर्त्ता आदि ने समयादि का भी विवर्ण करके किये हैं उनसे सिवाय इस प्रकार से सिद्धान्त

कर लेने के कि वर्तमान विक्रमी में से १३५ वर्ष घटाने से शालिवाहन का शक और ५६ वा ५७
घटाने से ईसवी सन् और इसी प्रकार सेअन्य संवत् भी और इसी हिसाब से ईसा मसीह के
५६ वा ५७ वर्ष पहिले कोई विक्रम नाम का राजा हुआ था कि जिसका यह संवत् प्रचलित
है, न तो कोई और फल निकला है और न कोई वैसा प्रामाणिक प्रत्यक्ष प्रमाण किसी को
मिला है और न कोई आज दे सकता है कि जैसा विचारे स्वर्गवासी चंद कवि के लिखे संवतों
को सिद्ध करने के लिये बड़ी धूम धाम से हम चाहते हैं। क्या यह न्याय है कि विक्रम के
प्रचलित संवत् को सिद्ध करने के समय तो हम गोलमाल कर जावें और चंद के संवत् को सिद्ध
करने के लिये दूसरे से प्रत्यक्ष प्रमाण मांगे? फिर बिचार कीजिए कि संस्कृत भाषा के कोषादि
में जो यह- **तत्र शककारकस्य विक्रमादित्यस्य हननात् शालिवाहनस्य शकर्तृत्वम्**"
लिखा प्राप्त होता है और आईन अकबरी के ग्रंथकर्त्ता ने भी यही आशय ग्रहण किया है। इस से
विक्रमादित्यजी का मरण तो १३५ में होना निश्चित ही है तथा १३५ वर्ष तक राज्य करना
भी स्वतः सिद्ध है। अब रहा यह कि विक्रम के संवत् का प्रारंभ उनके जन्म से अथवा गद्दी
पर बैठने के दिन से अथवा गद्दी पर बैठने पीछे किसी बड़े कार्य के करने के दिन से हुआ है।
यदि ज्योतिर्विदाभरण को कदाचित् सत्य होने की अपेक्षा असत्य ही मानें और उसे किसी
भी समय में बना क्यों न ग्रहण करें तथापि उसके अतिरिक्त कोई अन्य प्रमाण दृष्टि में नहीं
आता कि जिसके इस-"निर्हन्ति यो भूतलमंडले शकात्। सपंचकोट्यब्जदलप्रमान् कलो॥ स
राजपुत्रः शककारको भवेत्। नृपाधिराज्ये ह्युतशाककर्तृ हा॥" वाक्य के अनुसार पचपन करोड़
शकों को अथवा किसी शक-कर्त्ता को मारने से विक्रमी संवत् का प्रारंभ होना ही अति
संभवित प्रतीत होता है। तदन्तर यह अनुमान करना भी अनुचित नहीं है कि विक्रम ने
कुछ अपने बालकपन में तो ऐसा बड़ा साका किया ही न होगा किन्तु उस समय उसकी कम
से कम २५ वर्ष की वय तो भी होगी कि जिससे १३५ + २५=१६० एक सैा साठ वर्ष की सब वय
सिद्ध होती है। निदान उसको हम पृथ्वीराजजी और समरसीजी के ९२ वर्ष तक न जी सकने
के अनुमान की अपेक्षा से बहुत ही असंभव समझ सकते हैं। सारांश यही है कि चंद ने विक्रम
की १६० वर्ष की वय की असंभाव्यता से जो अपने लिखे संवतों को **अनन्द** संवत् संज्ञा दी
है वह अन्यथा नहीं है और प्रचलित विक्रमी संवत् कि जिसको हम **सनन्द** कहते हैं उसमें
अवश्यमेव कुछ **नन्द** का समय मिला हुआ है और वह चंद के संवत् को दोष देने जैसा स्वयम्
निर्दोषी प्रमाण रूप नहीं है। जब कि प्रचलित विक्रमी संवत् अपने को भले प्रकार सिद्ध कर
प्रमाण नहीं दे सकता तो वह जिस प्रकार से आज माना जाता है उसी प्रकार पृथ्वीराजरासो
के संवत् ९०। ९१ वर्ष के अन्तर के माने जाने में भी कुछ हानि दृष्टि नहीं आती। हमको एक
बड़ा शोक इस बात का है कि यदि विद्वनों ने रूपक ३५५ और ३५६ को एक दूसरे की संगति
लगाकर विचारा होता और रूपक ३५६ को बिलकुल हीं न छोड़ दिया होता तो रासो के संवतों
के विषय में संदेह ही नहीं हुआ होता क्योंकि वे दोनों रूपक मानों खड़े हुए पुकार पुकार कर
कह रहे हैं कि हमारे आशय ये हैं॥

५ पांचवें चंद के नवें नन्द के समय को नहीं ग्रहण करने का एक यह भी प्रबल कारण सब
के ध्यान में आ सकने जैसा है; कि महानन्द को नौ पुत्र थे, आठ तो बिवाहिता रानियों
से और एक चंद्रगुप्त नामक मुरा नाम की नाइन उपस्त्री से। हमारी इस बात को भी स्मरण
में रखना चाहिये कि मुरा नाम की नाइन से उत्पन्न होने के कारण चंद्रगुप्त और उस के वंशज
मौर्य्य कहलाये हैं। अन्य देश देशान्तर के मनुष्यों की अपेक्षा, हमारे स्वदेशीय बन्धुओं के

समीप कुलीन और अकुलीनों में परस्पर डाह वैर का होना कोई आश्चर्यदायक बात नहीं है क्योंकि यह व्यवहार सदा से चला आया है और आज भी सब छोटे बड़ों में विद्यमान है अर्थात् कोई अकुलीन चाहे जितनी उन्नति की दशा को क्यों न प्राप्त हो जाय और कोई कुलीन चाहे कैसा दरिद्री भी क्यों न हो जाय किन्तु वह कुलीन उस अकुलीन को संकर ही समझेगा । और इससे सदा दोनों में परस्पर द्वेष रह कर जो जब प्रबल होगा तब वह उस निर्बल को अवश्य नाश कर देगा और वे दोनों अपनी अपनी वंशावली में अपने अपने वैरी का नाम तक नहीं गिनेंगे । इसी कारण से हमारे आर्य-काल-निरूपकों (The Arya Chronologists) की भी यह शैली होगई है कि जो स्वयम् कुलीन हैं अथवा कुलीनों के पक्षपाती हैं वे उस अकुलीन राजा के नाम और समय को अपनी संपादित ख्यात में नहीं लिखते हैं और उसके समय आदिक को या तो उसके आगे पीछे के किसी कुलीन राजा में मिला देते हैं अथवा ऐसे स्थलों में यह लिख देते हैं कि इतने समय तक "कटार अथवा तरवारि ने राज किया इत्यादि" । इसके अनेक उदाहरण राजपुत्रों की वंशावलियों में मिल सकते हैं परन्तु एक ऐसा आधुनिक उदाहरण है कि जिस को सर्व साधारण जानते हैं वह मेवाड राज की वंशावली में **बनवीर** का है कि उससे ही विचार देखिये । क्या मेवाड देश के परम कुलीन महाराणाजी साहब और क्या और कुलीन उमराव सरदार और पासवानादि लोग और क्या हम जो कदाचित् मेवाड की ख्यात (Chronicles) लिखें तो बनवीर का नाम और उस का समय अपनी कुलीन अवली में न तो किसी २ ने मिलाया है और न हम मिलावेंगे किन्तु उसका वृत्त सब के जानने के लिये हम एक पृथक टिप्पण में लिख देंगे कि जिससे हम को पुरातत्ववेत्ता वृत्त का चोर न ठहरावें और जो कोई कदाचित् हम को ऐसा करने के कारण मुतअस्सिब अर्थात् दुराग्रही भी कहेंगे तो हम उसको अपनी एक अति प्रिय पदवी समझकर उस पर अभिमान करेंगे । इसी लिये कुलीन क्षत्रियों के अभिमानी चंद बरदाई ने विक्रमादित्यजी के समय में से अकुलीन मौर्य्य समय ९० । ९१ वर्ष का ह्रास करके शुद्ध क्षत्रिय समय ग्रहण किया है और उसका नाम विक्रम का **अनन्द** संवत् अर्थात् पृथ्वीराजजी का तृतीय शक रक्खा है । हम यह यहां तक भी मान कर कह सकते हैं कि यदि आज इस विषय को समर्थन करने को कोई भी प्रमाण न मिले तथापि चंद की निज-काल निरूपण शैली तो स्वयम् सिद्ध ही है ॥

६ छठें चंद के प्रयोग किये हुए विक्रम के **अनन्द** संवत् का प्रचार बारहवें शतक तक की राजकीय व्यवहार की लिखावटों में भी हमको प्राप्त हुआ है अर्थात् हम को शोध करते करते अपने स्वदेशी अंतिम बादशाह पृथ्वीराजजी और रावल समरसीजी और महाराणी पृथा बाईजी के कुछ पट्टे परवाने मिले हैं कि उनके संवत् भी इस महाकाव्य में लिखे संवतों से ठीक ठीक मिलते हैं और पृथ्वीराजजी के परवानों में जो मुहर अर्थात् छाप है उसमें उनके राज्याभिषेक का सं० ११२२ लिखा है । इन परवानों के प्रतिरूप अर्थात् Photo हमने अपनी ओर से ऐशियाटिक सोसाईटी बंगाल को भेट करने के लिये अपने स्वदेशी परम प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता डाक्टर राय बहादुर राजा राजेन्द्रलाल जी मित्र एल० एल० डी०, सी० आई० ई० के पास भेजे हैं और उनके अकृत्रिम होने के विषय में उनसे बहुत कुछ पत्रव्यवहार हुआ है । यदि हमारे राजा साहब अकस्मात् रोग ग्रस्त न हो गये होते तो उन्होंने हमारे इस बड़े परिश्रम से प्राप्त किये हुए प्राचीन लेखों को अपने विचार सहित पुरातत्ववेत्ताओं की मंडली में प्रवेश किया होता इन परवानों के अतिरिक्त हम को और भी कई एक प्रमाण प्राप्त होने की दृढ़ाशा है कि जिनको

हम उस समय विद्वत् मंडली में प्रवेश करेंगे कि जब कोई विद्वान् उनको क्रित्रिम होने का
दोष देगा । देखिए जोधपुर राज्य के काल-निरूपक राजा जयचंदजी को सं० ११३२ में और
शिवजी और सेतरामजी को सं० ११६८ में और जयपुर राज्यवाले पज्जूनजी को सं० ११२७ में
होना आज तक निःसंदेह मानते हैं और ये संवत् भी हमारे अन्वेषण किये हुए ९१ वर्ष के
अंतर के जोड़ने से **सनन्द** विक्रमी होकर संप्रत काल के शोध हुए समय से मिल जाते हैं ।
इसके अतिरिक्त रावल समरसीजी की जिन प्रशस्तियों को हमारे मित्र महामहोपा ाय कविराज
श्यामलदासजी ने अपने अनुमान को सिद्ध करने का प्रमाण में माना है वे भी एक अन्तरीय
हिसाब से (indirectly) हमारे शोध किये इस **अनन्द** संवत् को और उस के प्रचार को पुष्ट और
सिद्ध करती हैं । देखिए और इन दो ध्रुवों को अपने ध्यान में रख लीजिए कि प्रथम तो रावल
बापाजी के नाम पर सब ख्यात की पुस्तकों में सदैव से सं० १९१ लिखा चला आता है कि
जिसको कर्नैल टाड साहब ने तो बल्लभी के नाश से चीतोड़ प्राप्त होने तक का समय
माना है और मेवाड के छोटे छोटे लड़के तक इतना अवश्य जानते हैं कि बापाजी सं० १९१ में
हुए और उन्होंने १०१ वर्ष राज्य किया अथवा उनकी वय १०१ वर्ष की हुई और ऐसे आज तक
के इस बड़े निश्चय के साथ सर्वसाधारण के मानने को महामहोपाध्याय कविराजजी भी कदापि
अस्वीकार नहीं कर सकते हैं । दूसरे रावल समरसीजी के नाम पर भी उसी तरह सर्व साधारण के
दृढ़ निश्चय के साथ ११०६ का संवत् ख्यातिओं में लिखा हुआ बराबर चला आता है । अब
हमारे पाठक उक्त सब प्रशस्तियों के सब संवत् अर्थात् १३३२, १३३५, १३४२, और १३४४ में से
बापा जी के पूर्व का समय १९१ घटाकर देखें तो ११४१, ११४४, ११५१ और ११५३ पावेंगे कि जो
हमारे अनन्द विक्रमी से मिलजाते हैं । क्या यह प्रशस्तिये भी हमारे **अनन्द** विक्रमी संवतों से
आंतरीय हिसाब से नहीं मिल जाती हैं ? यह क्यों मिल जाती हैं इस बात के भेद को हम
अपनी समझ के अनुसार जानते हुए भी अभी प्रकाश नहीं करते हैं किन्तु किसी उचित समय
पर उसे शास्त्रार्थ के साथ प्रकाश करके अपने मेवाड राज की वंशावली को शुद्ध और
प्रतिपादन कर मेवाड देश की एक अमूल्य सेवा करेंगे ॥

७ सातवें यदि कोई यह तर्क करै कि **राजा नन्द** के विक्रमादित्यजी से पहिले अथवा पीछे
होने का मतान्तर प्राचीन समय के विद्वानों में होना कुछ भी सिद्ध हो जाय तब हम यह
अनुमान कर सकते हैं कि **अनन्द** और **सनन्द** संवतों के भेद अवश्य हो सकते हैं । अतएव हमारा
कहना यह है कि जिस किसी को इस विषय का कुछ मतान्तर हो वह एशियाटिक सोसाईटी
बंगाल के स्थापन-करनेवाले सर विलियम् जोन्स साहिब (Sir William Jones) लिखित
(The Chronology of the Hindus) **हिन्दुओं का काल निरूपण** नामक विषय के
अंतिम दो तीन लेख-खंड अर्थात् फिकरे पढ़कर समझ लें [देखो एशियाटिक रिसर्चेज़ पुस्तक
२) परन्तु स्मरण रहै कि हम राजा नन्द का विक्रम से पहिले होना अपने देश शास्त्रों के
अनुसार मानते हैं ॥

पाठको ! रूपक ३५६ भी पुरातत्व विद्या में बड़ा उपयोगी है । उस में आपको मालूम
होगा कि चंद यह तात्पर्य्य वर्णन करता है कि जिस ११०० अथवा **१११५ में पृथ्वीराजजी** उत्पन्न
हुए हैं वह संख्या कैसी है कि उसी ११०० अर्थात् १११५ में धर्म-सुत हुए थे तथा उसी
११०० अथवा १११५ में विक्रमादित्यजी भी हुए थे और उसी में अर्थात् विक्रम से ११०० अथवा
१११५ वर्ष पीछे पृथ्वीराज जी हुए हैं कि जिनका यह तृतीय शक में ने विप्रगुप्त [ब्रह्मगुप्त]

सोमेश्वरजी के अपूर्व तप से पृथ्वीराजजी उत्पन्न हुए ॥

स्लोक ॥　सोमेश्वर मचाबाहो । तस्यापूर्व तपो गुणैः ॥
तेने पुण्यं जगज्जेता । गर्भान्ते पृथुराडयम् ॥ छं० ॥ ६८६ रू० ॥ ३५७॥

सोमेश्वरजी का राव (वेन) को वधाई देना ॥

पद्धरी ॥ अनगेस पुत्ति हुअ पुत्र जन्म । विज्जुल चमंकि जनु मेघ घन्म ॥
वद्धाइ राव * सोमेस दीन । इक सहस हेम हय हुकम कीन ॥ छं ६८७ ॥

को गुन कर लिखा है (ख्यो विप्र गुन गुप्र) क्या चंद यह अमूल्य पुरातत्व इस रूपक में नहीं कहता है ? नहीं वह हमको निःसंदेह यही कहता हुआ दृष्टि आता है !! यदि यहां धर्मसुत का अर्थ युधिष्ठिर का ग्रहण हो सकता है तो हमारे देशी महाकवि का विक्रम से युधिष्ठिर तक का ११०० अथवा १११५ वर्ष का अंतर मानना मिस्टर बैन्टली साहब के अनुमान ११२३ के से बहुत मिलता हुआ है अर्थात् उस में केवल २३ अथवा ८ वर्ष का ही अंतर है । और यह हमारे स्वदेशी काल-निरूपकों की गणना से भी मिलता हुआ है क्योंकि ११०० अथवा १११५ युधिष्ठिर से विक्रम तक तथा उससे विक्रम तक ५१०० अथवा १११५ और विक्रम से पृथ्वीराजजी तक ११०० अथवा १११५ और इस गणना के अनुसार ८१४ कलिगत में युधिष्ठिर हुए । तथा चंद के कहे विप्रगुप्त कि जिसको हम ब्रह्मगुप्त होना अनुमान करते हैं उसके विषय में मिस्टर बैन्टली साहब यह कहते हैं कि वह विक्रमी ५८३ तदनुसार ५२७ ई० में हुआ था । उसने ब्रह्म-कल्प की गणना का प्रकार स्थापन और प्रकाश किया था कि जिस पर आधुनिक ज्योतिष का आधार है और ऐतिहासिक संवत् भी उसी के अनुसार परिवर्तन हुए हैं (देखो एशियाटिक रिसर्चेज़ पुस्तक ८ पृष्ठ २३६-७ इस ब्रह्मगुप्त की गणित में और अन्य ज्योतिषाचार्यों के सिद्वान्तों में कुछ अंतर है कि जिसके लिये अन्य कोई कोई इस ब्रह्मगुप्र को दोष देते हैं कि इस का कुछ विवर्ण Mr. Samuel Davis के लिखित हिन्दुओं की ज्योतिष विद्या The Astronomical Computations of the Hindus नामक लेख के पढने से ज्ञात हो सकता है (देखो एशियाटिक रिसर्चेज़ पुस्तक २)

इस संवत् संबन्धी झगड़े में हमारा अंतिम निवेदन यह है कि यह पुरातत्वविद्या ऐसी बड़ी सूक्ष्म और अथाह गहरी है कि जो विद्वान उसमें कदाचित् थोड़ा सा भी चूक जाय तो वह उसमें डूब जाता है और उसके खारे पानी के समुद्र में तिरना बहुत कठिन है और उस में पड़ी हुई किसी वस्तु को वही गोताखोर अर्थात् शोधक निकाल सकता है कि जिसे धर्म्मरूपी प्राण को शुद्ध अंतःकरण में स्थित करके गोता मारने का अभ्यास होता है ॥

३५७ पाठान्तर-सोमेसर । सोमैस्वर । तस्या । पूर्व । तयं । गुनं । गुणे । पुन्य । जगंज्जता । गर्भानं । गर्भान । प्रथिराजयं । प्रिथीराजयो ॥

इस रूपक के शुद्ध और अशुद्ध पाठों को सूक्ष्म दृष्टि से देखने से ज्ञात हो सक्ता है कि दुष्ट लेखकों ने उनको कैसे कैसे भ्रष्ट कर दिया है कि जिसके लिये स्वर्गवासी विचारे चंद को हम लोगों के दिये अनेक दोष सहने पड़ते हैं ॥

* देखो मालूम होता है कि चंद यहां अपने बाप का स्पष्ट नाम नहा लेकर महावरे से राव शब्द प्रयोग कर राव बेन का निर्देश करता है ॥

दिय ग्राम एक चय इक्क हथ्थ । परिग्रह प्रसाद सह कीन तथ्थ ॥
नीसांन वाजि दरबार जोर । घन गज्जे जान दरिया हिलोर ॥ छं० ॥ ६९८ ॥
पधाराइ राइ मुष दरस कीन । क्रित क्रम्म पुब्ब फल मान लीन ॥
करि जात क्रम्म मति ग्रंथ सोधि । वेदोक्त विप्प बर बुद्धि बोधि ॥ छं० ॥ ६९९ ॥
मंगल उचार करि नृत्य गान । अच्छरि अलाप सुर भुवन जान ॥
छं० ॥ ७०० ॥ रू० ॥ ३५८ ॥

पृथ्वीराजजी के जन्मोत्तर गुणों का वर्णन ॥

साटक ॥ जन्मोत्तरि गुन जन्म राजन् वरं, चालीस वर्षं चती ॥
सा भोगं धर लच्छि टिल्लि वरं, पंजाब पंचैा पथं ॥
इंन्द्रंप्रस्थय संभरी ववरयं, सोमेसजा जोतयं ॥
भुंक्तं मुक्तय बंधि गज्जन वरं, जन्मं करं सुक्तयं ॥ छं० ॥ ७०१ ॥ रू० ॥ ३५९ ॥

सोमेसजी का पृथ्वीराजजी के जन्मोत्तर गुन सुन कर हर्ष और शोक होना ॥

कवित्त ॥ सोम वत्त सुनि श्रवन । हर्ष अरु सोक उपन्नो ॥
दैव काल संजोग । तपै ढिल्ली घर थन्नैा ॥
कहै व्यास संभरी । क्रन्न इह बत्त प्रमानं ॥
किं जानै किं होइ । घरी इक घट्टन जानं ॥
व्रिम्मान मान संभर धनी । सुनी कित्ति अनगेस बर ॥
मंची प्रमान सब इष्ट गुरु । कहै राज पृथिराज बर ॥ छं० ॥ ७०२ ॥ रू० ॥ ३६० ॥ †

---

३५८ पाठान्तर—अनगैस । हुव । विजलं । बिजुंलि । चमंक । जुंनु । मेघ । जन्म । बद्दाय । राज । सोमेस । दीय । ग्रांम । इक । इक । हथः । हथ । परिगह । परीग्रह । कींन । तथ । वज्जि । गर्ज्जि । जांवि । पधराय । राय । मुंष । सरसन । हरष । कर्म । पुब । मांनि । क्रंम्म । मनि ॥ वेदेंक्त । विप्र । बुधि । प्रमोधि । गांम । ग्यांन । अछिर । अछर । सुरं । भूवन । जांनि ।

३५९ पाठान्तर—जन्मोतरि । राजन्म । वर । च्यालीस । वर्ष । घटी । सोभाग्यं । सोभाग्यं । लछि । दिलित । दिल्लित । वर । पंचं । पंच । इंद्रप्रस्थ । ववरय । जोतियं । भुक्त । वर । जन्यं ॥

३६० पाठान्तर—सोम । वती । उपनैा । उप्पनैा । देव । संजोग । ढिली । धर । थंनैा । क्रन । वत । जाने । होय । यक । घटिन । जांन व्रमांन । संभरि । सुतिकिची । प्रमान । प्रिथीराज । पृथीराज ॥

† यह रूपक हमारे पास की और सब पुस्तकों में तो है किन्तु सं० १७७० वाली में नहीं है ॥

विक्रम के सदृश पृथ्वीराजजी हुए कि जिन की बुद्धि का वर्णन चंद करता है ॥

दूहा ॥ विक्रम राज सरीस भै। । बुधि ब्रंनन कवि चंद ॥
भूत भविष्यत व्रत्तमन । कहत अनूपम छंद ॥ छं० ॥ ७०३ ॥ रू० ॥ ३६१ ॥

पृथ्वीराजजी के जन्म समय के ग्रहों की स्थिति ॥

दूहा ॥ ग्रह स पंच चव हंस हथ । लगन सु अष्टम मंद ॥
दुतिया गुरु मेषह तरनि। चिचह जनम नरिंद ॥ छं० ॥ ७०४ ॥ रू० ॥ ३६२॥

सोमेश्वरजी का दरबार में बैठ ज्योतिषियों से पृथ्वीराजजी की जन्मपत्री का फल पूछना और पंडितों का फल वर्णन करना ॥

पद्धरी ॥ दरबार बैठि सोमेस राइ । लीने हजूर जोतिग बुलाइ ॥
कहैा जन्म कर्म बालक विनोद । सुभ लगन महूरत सुनत मोद ॥ छं० ॥ ७०५ ॥
संवत्त इक्क दस पंच अग्ग । वैसाष मास पष क्रष्ण लग्ग ॥
गुर सिद्धि जोग चिचा निषच । गर नाम करन सिसु परम हित्त ॥ छं० ॥ ७०६ ॥
ऊषा प्रकास इक घरिय रात । पल तीस अंस चय बाल जाति ॥
गुरु बुद्ध सुक्र परि दसै थान । अष्टमै बार शनि फल विनान ॥ छं० ॥ ७०७ ॥
पंच दुअ थान परि सोम भोम । ग्यारमै राह षल करन होम ॥ छं० ॥ ७०८ ॥
बारमै सूर सो करन रंग । अनमी नमाइ तिन करै भंग ॥
बिनपेस सेव रहि है न कोइ । भंजै मिवास सुष त दिन होइ ॥ छं० ७०९ ॥
प्रथिराज नाम बल हरै छच । दिल्लीय तषत मंडै सु छच ॥
च्यालीस तीन तिन वर्ष साज । कलि पुहमि इंद्र उद्धार काज ॥ छं० ॥ ७१० ॥
पर लहै द्रव्य पर हरै भूमि । सुष लहै अंग जब होइ भूमि ॥
बरनीय अष्ट दुय लेय ब्याहि । दुर्ग्ग नात थपि अप्प वाहि ॥ छं० ॥ ७११ ॥

---

३६१ पाठान्तर–सरीर । बुद्धि । व्रनन । वत्तेमन ॥
३६२ पाठान्तर–हंस सह । लेगन । थले । गुर । तसणि जन्म । नरिंद । नरिंदः । भरिंद ।
३६३ पाठान्तर–सोमेस राय । हजुर । पंडित । बुलाय । कर्म्म । बालिक । मुंहूरत । संवत् । संवतह । ईक दस । दह इक । दश पंच अग्र । पंच अग्र । वैशाष । वैसाष त्रितीय । षष्य । क्रष्ट लग्र । सिद्धि । सिधि । जोग । योग । नित्तत्र । नत्तत्र । गुरु । गुरु । सिसुं । घरी । जांति । गुरुं । दसम । दशम । थांन । अष्टमे थांन । शति । विनांन । दूत्र । थांन । सैाम भैाम । हैाम । बारमे । करण । करैं । सैव । हैं कोई । कोय । भंजे । मेत्रास । मैवास । सुषं । तं । होइ । नाम ।

संषेप विरद उच्चार कीन । क्यौं सकौं जंपि मो बुद्धि हीन ॥
सुनि रइ दान मंग्यौ अपार । है गै सु वस्त्र द्रव्या न पार ॥ छं० ॥७१२॥
सब सहर नारि शृंगार कीन । अप अप्प झुंड मिलि चलि नवीन ॥
थपि कनक थार भरि द्रव्य दूब । पट कूल जरफ जर कसी जूब ॥ छं० ॥ ७१३॥
अक्छित अनूप रोचन सुरंग । मृदु कमल हास लोइन कुरंग ॥
इक जात मद्धि इक फिरत गेह । पहिराइ परस पर बढत नेह ॥ छं० ॥ ७१४॥
दरबार भी बरनी न जाइ । सुगंध वास नासा अघाइ ॥
बिगसंत बदन छत्तीस वंस । जदुनाथ जन्म जनु जदुन वंस ॥
छं० ॥ ७१५ ॥ रू० ॥ ३६३ ॥

हरें । स्रूत्र । शत्र । दिलिय । दिल्लिय । मंडे । बूंदीवाली में-चालीस वर्ष तिम मांस साज । चालिस । पुहवि । हरे । भूंम । सुंब । भूंम । वरणीय । वरनीअ । अष्ट बल । लेइ । व्यांहि । दुंनग । दुंग । थेपि । चाहि । विरुद । उचार । सकों । जंपि । मा । सुंनि । राय । दांन । हय । गाय । द्रव्यान । त्रव्याम । श्रंगार । भूड । नवान । कुंल । कल । उब्ब । अछित । रोचन । लोइन । कुरंग । जाय । मधि । ग्रेह । नेह । जाय । सुगंध । नाशा । अघाय । विगसत । छत्तीस । जदुनाथ । यदुन ।

जैसे कवि चंद रूपक ३५५ और ३५६ में अपनी प्राचीन गूढ़ भाषा के गूढ़ार्थ में पृथ्वीराजजी का जन्म संवत वर्णन कर आया है; वैसे ही यहां भी वह इन रूपक ३६२ और ३६३ में उन की जन्मपत्री तथा उस के ग्रहों का फलादेश वर्णन करता है । इन दोनों रूपकों के पाठ जहां तक हमारे पास की पुस्तकों से शुद्ध हो सके वहां तक हमने शोध दिये हैं; कि उनके इतने ही शुधने पर जो कई एक शंका अब तक लोग करते थे वह दूर हो गई । और जो इसीतरह और भी कुछ प्राचीन पुस्तकें मिल जावें और उन से यह रूपक फिर शोध दिये जावें तो आशा है कि इन रूपकों में लिखी ज्योतिष शास्त्र संबन्धी सब बात मिल जावें और विद्वानों की जो जो शंकाए अब भी बाकी रहती हैं वे भी निवारण हो जांय । इस के अतिरिक्त हमारे पाठक यह अच्छी तरह जानते हैं कि इस रासा जैसी भ्रष्ट लिखित प्राचीन पुस्तकों में अथवा वैसे ही कोई कोई बड़े प्रतापी मनुष्यों की जन्मपत्री अथवा ज्योतिष शास्त्र के अनुसार जिसका कुछ अन्वेषण किया जावे ऐसा कुछ विषय हम को वर्त्तमान समय में कहीं लिखा हुआ प्राप्त होता है उसको यथायोग्य रीति शोध लेना कैसा कठीन है । उसमें भी चंद की जैसी गूढ़ार्थ की कठिनता और ज्योतिष शास्त्र के सिद्धान्तियों के मतान्तर पर दृष्टि दी जावे तो प्रत्येक सज्जन मनुष्य सुखपूर्वक कह सकता है कि यह कार्य बहुतही कठिन है और जो कदाचित ऐसी कठिनता का कुछ पता लगा सकें तो हमारे स्वदेशी जगत विख्यात ज्योतिष शास्त्राचार्य पंडित वर श्री बापूदेवजी शास्त्री अथवा उन के शिष्य वर्ग में से भी कोई लगा सकते हैं; किन्तु अन्य के वश का यह कार्य नहीं है । इस जन्मपत्री को शोधने के लिये हमने बड़ा परिश्रम कर रक्खा है अर्थात जितने पाठान्तर रासो की भिन्न भिन्न पुस्तकों में से मिलते जाते हैं और जितनी भिन्न २ प्रकार की पृथ्वीराज जी की जन्मपत्रियें भरतखंड में से मिलते हैं वे भी एकत्र किये जाते हैं और ब्रह्मगुप्त का रचित ज्योतिषशास्त्र की पुस्तक भी प्राप्त करने का उद्योग कर रहे हैं, कि

जिसका चंद का आश्रम करना उसकी शैली से अनुमान होता है । इस प्रकार से शोध होने पर हम इस जन्मपत्री के विषय में जिस विद्वान के गणित के अनुसार जो बात निश्चय होगी वह प्रकाश करेंगे। किन्तु अभी हम कुछ उन शंकाओं के विषय में भी कहते हैं कि जो इस विषय में महामहोपाध्याय कविराज श्री श्यामलदासजी ने कवि का सरल और स्पष्ट अर्थ न समझकर केवल प्रतिकूल–अनुमान-जन्यभ्रम के वश हो अपने खंडन–ग्रंथ में की हैं–

१ प्रथम कविराजजी ने पृथ्वीराजजी के जन्म संवत् के प्रकाश करनेवाले रूपक ३५५ के साथ का रूपक ३५६ जैसे अपने खंडन-ग्रंथ में छोड़ दिया है वैसेही यहां भी उन्होंने रूपक ३६२ को छोड़ कर केवल रूपक ३६३ के आधार पर जन्मपत्री के संबन्धित दोष दिये हैं । इन दोनों स्थलों को हमारे विद्वान पाठक विचार कर समझ सकते हैं कि रूपक ३५६ और ३६२ को छोड़ देना उचित था कि नहीं और उनका रूपक ३५५ और ३६३ के साथ पूर्ण संबन्ध है कि नहीं। यदि पूर्ण संबन्ध है तो निर्णय करने के समय उनका त्याग देना किसी वास्तविक पुरातत्ववेत्ता के लिये कैसा अनुचित कर्म है ॥

२ दूसरे जो कुछ दोष इस विषय में दिये गये हैं वे मालूम होते हैं किसी एक पुस्तक के पाठ पर से ही दिये गये हैं। किन्तु मैं आशा करता हूं कि डाक्टर होर्नेली साहब कि जिन्हों ने अपने हाथ से रासो के कुछ भाग को बड़ी सूक्ष्म दृष्टि देकर शोधा है वे भले प्रकार साक्षी दे सकते हैं कि इस ग्रंथ के पाठान्तर, अपपाठ, विशेष पाठ और न्यून पाठ आदिक की क्या दशा है और क्या किसी एक पुस्तक के पाठ पर ही किसी बात का निर्णय होना उचित है ॥

३ तीसरे यदि रूपक ३६२ न छोड़ दिया गया होता और पुरातत्ववेत्तओं के निर्णय करने की रीति से ध्यान दिया गया होता तो कविराजजी अपनी कितनीक शंकाओं के समाधान स्वयम् इन रूपकों और भिन्न भिन्न पाठान्तरों से जान सकते थे जैसे कि–

(क) रूपक ३६२ से पृथ्वीराजजी के जन्म की दूज तिथि ज्ञात होती है । यदि तिथि की संख्या का शब्द अशुद्ध भी हो तो भी हम कवि के कहे चित्रा नक्षत्र से स्पष्ट अनुमान कर सकते हैं कि या तो यह दूज कवि ने पड़वा उपरान्त की ग्रहण की है अथवा किसी और तिथी की संख्या वहां भ्रष्ट हो गई है । हम ज्योतिष शास्त्र तो नहीं जानते हैं किन्तु पंचद्राविड ब्राह्मणों में अभी तक प्राचीन प्रणाली चली आती है कि यज्ञोपवीत होने पर सात वर्ष के बालक को भी पितादि वेदाङ्गों के कुछ ध्रुवे अर्थात् गुरु सिखाया करते हैं। उन के अनुसार हम यह कह सकते हैं कि हमारे आर्य मासों के नाम नक्षत्रों पर से पड़े हैं और प्रत्येक महिने का नक्षत्र शुदी १४ किंवा पूनम अथवा वदी प्रतिपदा के दिवस में होता है अतएव इस दूज के स्थान में कोई ऐसीही तिथि थी की जो भ्रष्ट हो गई है । देखो कविराजजी ने '**वैशाख तृतीय पख कृष्ण लग्ग**" पाठ लिखा है उसके स्थान में हम को सं० १६४० । १७७० और १८४५ की पुस्तकों में यह '**वैसाख मास पष कृष्ण लग्ग वा अग्ग**" पाठ लिखा मिलता है और वह एक प्रकार से ठीक भी दीखता है क्योंकि रूपक ३६२ में कवि तिथि कह आया है अतएव अब वह यहां शेष मास और पक्ष कहता है । चित्रा नक्षत्र के विषय में कुछ गोलमाल किसी पुस्तक में दृष्टि नहीं आती और वैशाख के विषय में कुछ गड़बड़ सी दीखती है अतएव जो कोई चित्रा से चैत्र मास का होना अनुमान करै तो हमारी सम्मति में तो वह कोई आश्चर्य दायक बात नहीं है ॥

(ख) कविराजजी ने कवि के कहे '**बारमै सूर सो करन रंग** पर ही विशेष दोष दिया है और उसका बारहवें घर में होना असंभव माना है तथा इतनी ही बात पर दोष देकर अन्य यहों का कुछ शोध नहीं किया है। परंतु जो वे रूपक ३.२ के तीसरे चरण पर कुछ थोड़ी सी भी दृष्टि देते तो उनको मालूम हो जाता कि चंद कवि मेष का सूर्य होना स्वयम् कहता है कि जो संभव भी है "**दुतिया गुरू मेषह तरनि**" इससे यह भी समझ सकते थे कि जब मेष के सूर्य का बारहवें घर में होना कवि कहता है तब वृष लग्न भी है और "ऊषा प्रकाश इक घरिय रात" से कवि का गूढ़ार्थ भी यह है कि पृथ्वीराजजी का सूर्योदय के पश्चात् जन्म होने से ऊषा एक घड़ी थी अर्थात् ऊषा के एक घड़ी पीछे उनका जन्म हुआ ॥

(ग) कविराजजी के खंडन ग्रंथ में "**गुरु सिद्ध जोग चित्रा नखत्त**" पाठ से सिद्ध योग ग्रहण किया है कि जो चित्रा नक्षत्र के साथ वा पास आना असंभव है परंतु थोड़ी सी भी सूक्ष्म दृष्टि देकर देखते अथवा पुस्तकान्तर में पाठ देखते तो कितनीक पुस्तकों में सिद्धि पाठ जैसे हमको मिल गया वैसे मिल जाता ॥

(घ) कविराजजी ने अपने खंडन ग्रंथ में बड़ी बड़ी सूक्ष्म युक्तियों से सूक्ष्मतर अनुमान किये हैं परंतु इस स्थान पर वे बड़ी ही बेतरह चूक गये हैं। उन्होंने "**गुरु नाम करन सिसु परम हित्त**" का **गुरु** पाठ से धोखा खाकर यह अर्थ किया है कि "गुरु ने बड़े प्रेम से बालक का नाम रक्खा" किन्तु यह अर्थ बिलकुल ही असत्य है। यद्यपि इस **गुरु** पाठ का पुस्तकान्तर में **गर** पाठ स्पष्ट मिलता है परंतु वह न भी मिले तथापि पुरातत्ववेत्ता विद्वान इस छंद की प्रत्येक तुक को एक दूसरी से संगति मिलाकर भले प्रकार जान सकते हैं कि कवि "**तिथि वारं च नक्षत्रं योगं करणमेव च**" के अनुसार यहां यह कहता है कि "गर नामक करण शिशु को परम हितकारी है" न कि यह कि-गुरु ने बड़े प्रेम से बालक का नाम रक्खा-हमारे हे सज्जन पाठको! आप सोचो, विचारो, न्याय करो, और सत्य सत्य कहो कि यह महा अनर्थ करने वाली भूल है कि नहीं और जो हम इतना परिश्रम केवल स्वदेशवत्सलता से उत्तापित होकर न करते तो हमारे देश की हिन्दी भाषा और ऐतिहासिक विद्याओं की कितनी हानि संभव थी। राजपूताने के कितनेक कवि लोग अपने को हिन्दी भाषा के काव्यों में ऐसा उत्कृष्ट समझते हैं कि मानो अन्यदेशीय उनके आगे कुछ मालही नहीं है परंतु इस अवसर पर हमको मिस्टर जोन बीम्स साहब का यह कहना स्मरण आता है कि "The Pandits of Rajputana even do not understand Chand beyond the general drift of the poem." "राजपूताने के पंडित भी चंद के काव्य को उसके एक साधारण भावार्थ के सिवाय नहीं समझते हैं" ॥

(ङ) कविराजजी के लिखे पाठ में "**पंचमें थान परिसोम भोम**' है और हम को पुस्तकान्तर में "**पंच दुअ थान परि सोम भोम**" पाठ मिला है। क्या इस से जन्म पत्री के ग्रहों में कुछ अंतर नहीं पड़ जाता है? और क्या जब तक कि अनेक प्राचीन पुस्तकों से इन रूपकों का पाठ मिलानकर के शुद्ध न किया जावे तब तक जन्मपत्री को अशुद्ध कह देना मानों सहसा सिद्धान्त कर लेना नहीं है? यदि कोई कोई विद्यमान पुरातत्ववेत्ता अपने सहसा सिद्धान्त कर लेने को अच्छा समझ लेना अयोग्य नहीं समझेंगे और वे इस प्रचार को एक कमल बंद नहीं कर देंगे तो पुरातत्वविद्या को निःसीम हानि पहुंचनी संभव है। यहां कन्या का चंद्रमा और पृथ्वीराजजी का पृथ्वीराज नाम होने के कारण उनकी कन्या राशी का होना स्पष्ट है। और

पृथ्वीराजजी के जन्म होने पर क्या क्या आश्चर्यदायक बातें हुई ॥

कवित्त ॥ भयौ जनम पृथिराज । द्रुग्ग षर हरिय सिषर गुर ॥
भयौ भूमि भूचाल । धर्मम धम धम्म अरिनि पुर ॥
गढन कोट सें लोट । नीर सरितन बहु बढ्ढिय ॥
भै इक्क भय भूमिया । चमक चक्रित चित चढ्ढिय ॥
षुरसान थान षल भल परिय । ग्रभ्भ पात भय ग्रभ्भनिय ॥
बेताल बीर बिकसे मनह । हुंकारन षह देवनिय ॥
छं० ॥ ७१६ ॥ रू० ॥ ३६४ ॥

पृथ्वीराजजी की बाल अवस्था के चरित्रों का वर्णन ॥

कवित्त ॥ बरष बधै बिय बाल । पिष्ष्य बढ्ढै इक मासह ॥
घरी दीह पल पष्य । मास लष्षय ब्रष तासह ॥
मनिगन कँठला कंठ । मद्धि केहरि नष सोहंत ॥
घूघर वारे चिहुर । रुचिर बानी मन मोहत ॥ छं० ॥ ७२६ ॥ रू० ॥ ३६७ ॥

ज्योतिष शास्त्र के एक अवल ध्रुवों के अनुसार यह अनुमान कर लेने का काम भी चंद ने हमारे ऊपर ही छोड दिया है कि कन्या के चंद्रमा के साथ केतु भी है क्योंकि राहु और केतु सदी परस्पर साथ में रहते हैं ॥

३६४ पाठान्तर-जन्म । प्रिथीराज । पृथीराज । प्रथिराज । दुग । दुंग । भूवाल । धंम । कोट । सै । लोंट । वहि । वढिय । भैवक्क भय भूमियांन । भय वक्रित भूमिया । चमकि । चढिय । षुरसांन । थांन । परीय । ग्रभ । वैताल । विकसै । नयन । हुंकारन । देवनीय ॥

इस रूपक में जो कुछ आश्चर्यदायक बातों के भाव कवि ने कहे हैं वे कोई वास्तविक आश्चर्य नहीं हैं किन्तु कवि लोग बड़े बड़े प्रतापी पुरुषों के जन्मादि के वर्णन में अद्भुत रस का आश्रय करके प्रायः ऐसा प्रसंग बांधा करते हैं । देखो जैसे यहां "धमकि धम धम्म अरिन पुर" अथवा 'षुरसान थान षल भल परिय" कवि ने कहा है । वैसे ही तबक़ात नासरी नामक फारसी तवारीख़ में देखो कि महमूद ग़ज़नी जिस रात्रि को उत्पन्न हुआ था उसी समय सिन्धु नदी के किनारे के एक मंदिर का फट जाना उस में लिखा है । उससे केवल इतनाही समझ लेना चाहिये कि महमूद मंदिरों को भ्रष्ट करने और मूर्त्तियों को तोड़ फोड़ डालनेवाला हुआ है अतएव कवि ने उसके जन्म समय भी वैसाही उसके प्रताप का एक चिन्ह वर्णन किया है । इस रूपक में बीर और अद्भुत रस मिले हुए हैं अतएव आक्षेप करनेवाले अथवा किसी कोमल हृदय वाले मनुष्य के कान उस के पढ़ते ही खड़े हो जाते हैं, अर्थात् रस अपना प्रभाव उस को प्रत्यक्ष दिखा देता है ॥

३६५ पाठान्तर-बधे । पिय॰ । बाधे । षल पलघ । पष्य । पष । लष्यीय । लषीय । वष । मनिगनि । कंठला । मधि । केहरि । सोहत । वाले केस । बारे केस केसरि सुंनडि सुंभ । दरसन । ज्योति । ज्योति । जरत्त । इक । छिन । संलसि । परत ॥

केसर सु मंडि सुभ भाल छवि। दसन जोति हीरा हरत ॥
नह नलप हूक्क थह षिन रहत। झुलसि उठि उठि गिरत ॥
छं० ॥ ७१७ ॥ रू० ॥ ३६५ ॥

दूहा ॥ रज रंजित अंजित नयन। घूंठन डोलत भूमि ॥
लेत बलैया मात लषि। भरि कपोल मुष चूमि ॥
छं० ॥ ७१८ ॥ रू० ॥ ३६६ ॥

पद्धरी ॥ अंगुरिन लग्गि रगि चलत लाल। सर मद्धि उठत गज हंस बाल ॥
मिलि बाल जाल फबि रही केलि। बढि रही दूंद जनु बीज बेलि ॥ छं० ७१९ ॥
जनु रमत कमल हरत कमल अग्ग। तप तेज बढ्ढि मुष षिच नग्ग ॥
सब देव तेज देषंत अंग उकार अंग अदभुत प्रसंग ॥ छं० ॥ ७२० ॥
सँग बाल बैठि भोजन करंत। परिवार वस्तु लै हठ धरंत ॥
आदर अदव्व सष्षीन देत। बगसीस करत हिय परम हेत ॥ छं० ॥ ७२१ ॥
है हथ्थि चढत बढ्ढत आनंद। मन मौज चौज कवि पढत छंद ॥
जिन हृदय कमल विद्या ह हेत। छल छेद भेद तिन बुद्धि लेत छं० ॥ ७२२ ॥
पाइक्क संग कायक्क केलि। धरि धूप हथ्थ बाहंत भेलि ॥
गहि बग्ग हथ्थ फेरत तुरंत। नट नृत्य निपुन धावत कुरंग ॥ छं० ॥ ७२३ ॥
जल केलि करत मिलि सजन संग। अल्लोल कलभ जनु सरति रंग ॥
पकवांन पांन सुगंध पूर। मादक सु मोद सुष सुवन नूर ॥ छंद ॥ ७२४ ॥
षेलत अषेट संग स्वानडोर। बग्गु वधंत पर गोस कोर ॥
सुष घरिय पहर दिन पष्य मास। सोमेस सूर चित बढत आस ॥ छं० ॥ ७२५
जिम राम कृष्ण सुख नंद गेह। संभरिय राय तिम दसा देह ॥
छं० ॥ ७२६ ॥ रू० ॥ ३६७ ॥

३६६ पाठान्तर-अजांत। घूठन। डोलत। बलइया। भुंब। चूंम ॥

३६७ पाठान्तर-लगि। लगि लगि। लाल। कैलि। अय। तैजि। वढि। षत्रिग। षत्रि। अदब। षग। तैज। देबत। उदार। अदभूत। सुरंग। संग। वैठ करत। वस्तू। वस्त। हठि। अदब। सथीन। हीय। हथि। वढत। मोज। चोज। रिदे। सुंहेत। विद्या सु। छल। वेदि। भैदि। छेदि। बुधि पाइक। काइन। कैलि। धोप। धोप। हय। बांहंत। वग। हय। मृत्य निपुन्य। तुरंग। कैलि। अलोल। सरमि। सुगंध। पुर। षेलत। अषेट। संगि। स्वांन। डोरी। बगुरि।

कवित्त ॥ कै दसरथ ग्रह राम । कै * धाम वसुदेव कृष्ण वर ॥
कै कलि कस्यप कूष । जानि उपज्यौ किरनाकर ॥
कृष्ण ग्रेह कै काम । कै * काम अंगज जनु अनुरध ॥
कै * नल कस्यप अवतार । किधौं कैामार दृश्य रुध ॥
लषिन बनिस बहुतरि कला । वाल बेस पूरन सगुन ॥
क्रीडत गिलोल जब लल कर । तब * मार जानि चापक सु मन ॥
छं० ॥ ७२७ ॥ रू० ॥ ३६८ ॥

दूहा ॥ कुटत गिलोला हथ्थ तैं । पारत चोट पयत्त ॥
कमल नयन जनु कांमिनी । करत कटाक्ष कयत्त ॥
छं० ॥ ७२८ ॥ रू० ॥ ३६९ ॥

पृथ्वीराजजी का गुरु राम से सब प्रकार की विद्या सीखना ॥

दूहा ॥ कोइक दिन गुर राम पैं । पढी सु विद्या अप्प ॥
चवदसु विद्या चतुर वर । लई सीष पट लिप्प ॥
छं० ॥ ७२९ ॥ रू० ॥ ३७० ॥

वंधत । छगीस । कैरि । कोरि । धारीय । परक्र । पव । सोमोस । सुर । चित । वढि । वढ्ढि । रांम । कष्णुं । सुभि । ग्रेह । जिम रांम नंद सुष कृष्ण ग्रेह । संभरीय । राव । देह ॥

* यह। शब्द पाठ में विशेष है । ऐसे उदाहरण इस ग्रंथ की लिखित पुस्तकों में बहुत हैं और वह भी किसी किसी में ऊपर से लिखे हुए हैं । इसका कारण हमें विचार करने से यह मालूम होता है कि किसी कवि ने पढ़ने के ससय अर्थ के लगाने की सुगमता के लिये इन संबन्ध के सूचन करनेवाले शब्दों को संकेत की भांति लिख लिया होगा और ऐसी पुस्तक से प्रति करनेवाले लेखकों ने उनको पाठ में मिलाकर प्रति कर दी है इस हमारे समाधान की पुष्टि में कई एक ऐसे स्थल हम अपने पास की प्राचीन पुस्तकों में बतला सकते हैं । अतएव इनको कवि की भूल अथवा Poetical licience नहीं समझा चाहिये ॥

३६८ पाठान्तर–कें । यिह । रांम । धांम । कैं । कश्यप । जांनि । उप्पज्जयैा । किरनांकरि । गेह । कांम । कांम । अनिरुद्ध । कश्यप । किधो । किधों । कैांमार । ईश्व । लष्यन । लषनै । वतीस । वहोतरि । वेश । सुगन । जांनि । चांपक । सुंमन ॥

इस रूपक की पहिली चार तुकों के चरण कई एक पुस्तकों में उलट पलट हैं जैसे कि पहिली तुक के दूसरे चरण के स्थान में तीसरी तुक का दूसरा चरण; दूसरी तुक के स्थान में चौथी तुक; तीसरे की दूसरी में पहिले की दूसरी; और चैाथे के स्थान में दूसरी तुक है ॥

३६९ पाठान्तर–हुथ । हाथ । तैं । पयल ; कांमिनी । कटाछि । कटाल ।

३७० पाठान्तर–पंन्नह । पंद्रह । पंन्न कोइक । पै । पैं । सू । चउदह । वउदै । लइ शीषि पट लिय ॥

पद्धरी ॥ लिषि सिष्य कुँअर प्रिथिराज राज। गुरु द्रोन पास सुत ध्रम्म नाज ॥
ॐ नमो सिद्धि प्रथमं पढाय। सब भाव भेद अष्षर बताय ॥ छं० ॥ ७३०॥
दस पंच † दिन्न अध्येंन कीन। दस च्यारि सार सब सीष लीन ॥
सीषी सु कला दस अट्ठ च्यारि। तिन नाम कहत कबि अग्ग सारि॥ छं०॥ ७३१॥
गुरु गीत बाद बाजित्र न्रत्य। सोचक सु वाच्य सुविचार हत्य ॥
मनि मंच जंच बास्तुक विनोद। नैपथ्य विलास सुनि तत्त मोद ॥ छं०॥ ७३२॥
साकुन्न कला क्रीडन विसार। चित्रन सु जोग कवि चवत चारु ॥
कुसु मेष कला जुत इंन्द्र जाल। सुचि क्रम विचार आहार लाल छं०॥ ७३३॥
सौभग प्रयोग सूगंध वस्त। पुनरोक्त छंद वेदोक्त हस्त ॥
बानिज्ज विनय भावित्त देस। आवद्ध जुद्ध निर्जुद्ध सेस ॥ छं० ॥ ७३४ ॥
बरनंत समय हस्ती तुरंग। नारी पुरुष्य पंषी विचंग ॥
भ्रू भू कटाक्ष सुक्षेष सल्य। द्रष क्रम प्रष्ण उत्तर विजल्य ॥ छं० ॥ ७३५ ॥
सुभ सास्त्र कहे गनिकत्त पढन्न। लिषतव्य चित्र कविता वचन्न ॥
व्याकन्न कथा नाटक्क छंद। अविधांन दरस अलंकार बंध ॥ छं० ॥ ७३६॥
धातक सु कर्म सुभ अर्थ जानि। सुर सरी कला बहुतरि बषान ॥
छं० ॥ ७३७ ॥ रू० ॥ ३७१ ॥

दूहा ॥ कला बहुत्तर करि कुसल। ऋगि निबद्ध जिय जानि ॥
हेत आदि जानन निपुन। चतुरासीत विग्यान ॥ छं० ॥ ७३८॥ रू० ३७२॥

---

† इस दसपंच शब्द को पंद्रह ही दिन का वाचक नहीं समझना किन्तु कुछ दिन अथवा कुछ समय अथवा थोड़े दिनों का वाचक समझना उचित है क्योंकि रूपक ३७० में स्पष्ट कोइक दिन पाठ आ गया है ॥

३७१ पाठान्तर-लिपि। शिष्य। सिषि। कुअरं। कुंअर प्रिथीराज। पृथीराज। गुरं। गुर। द्रोण। पासि। धम। नमः सिद्धिं। पढाइ। भेद। अष्यर। बनाइ। बताई। अध्ययन। अध्यैन। दस पंच दिव्य अध्येन कीन। सीषि। अठ। नांम। कहित। अंग। सार। गुर। व्रत्य। सोचक। व्रत्य। वास्तुन। विनोद। नैपंथ। सुंनि। तत। साकुन। शाकुन। वितार। विचार। सू जोग। कुंस। युत। सोभग। प्रयोग। पुनरुक्ति। वेदोक्त वस्त। वांनिज। भावित आवध। युद्ध। निरयुद्ध। सेस। पुरुष। वचंग। भूं भूं। सुलेष ब्रष। छंद। उतर। विजल्यं। कहे। पंढंन। लिषितं व्याचित्र। लिषितव्य। वचन। व्याकन। नाटक। नाटिक। दरसन। अलंकार। शुभ। जांनि। जांण। बषांनि।

३७२ पाठान्तर-बहुतरि। जांनि। जांनन। विद्यांन। विग्यांन ॥

अरिल्ल ॥ चतुरासीत बिग्यानन जानन । भर मन मन आसंका भाजन ॥
मनिहा बीर सदा मन मोदन । बहुतरि बिचिच छचीस विनोदन ॥ छं० ॥ ७३९ ॥
दरसन श्रवन गीत वर वादी । नृत्य नृत्य पाठक पुनि आदी ॥
लेषक चित्त बाज बक्तबनि । सस्त्र सास्त्र जुडाकर तत्वनि ॥ छं० ॥ ७४० ॥
जुद्ध गनित पंषी गज तुरगा । आषेटक दूतन जल उरगा ॥
जच त मंच महोछव पचन । पुष्फ कला फल कथा सु चिचन ॥ छं० ॥ ७४१
करन पदारथ आयुध केली । बलकरि सूचह तत्व पहेली ॥ छं० ॥ ७४२ ॥ रू० ॥ ३७६ ॥

दूहा ॥ कमल वदन रवि तेज कर । लष्यन संति बत्तीस ॥
कल नित प्रति सीषत कला । आवध धरन छतीस ॥ छं० ॥ ७४३ ॥ रू० ॥ ३७७ ॥

साटक ॥ विद्या वंस विचार सत्य विनयं, सौच्यं समाधीनता ॥
सन्मानं संस्थान सौष्य विजयं, सौजन्य सौभाग्ययं ॥
संपूर्णं च सरूप रूप प्रसनं, चिचं सदा चारनं ॥
सांगीतं च सजोग चारु सकलं, विस्तारयंते कला ॥ छं० ॥ ७४४ ॥ रू० ॥ ३७८ ॥

दूहा ॥ गुन गरिष्ठ गौ विप्र प्रति । पूजक दान वरीस ॥
सब्द आदि दै निपुन अति । सास्त्रह सत्तावीस ॥ छं० ॥ ७४५ रू० ॥ ३७९ ॥

स्लोक ॥ संस्कृतं प्राकृतं चैव । अपभ्रंशः पिशाचिका ॥
मागधी सूर सेनी च । षट् भाषाश्चैव ज्ञायते * ॥ छं० ॥ ७४६ ॥ रू० ॥ ३८० ॥

पृथ्वीराजजी के बत्तीस लक्षणों का वर्णन ॥

स्लोक ॥ विनयी गुरजनज्ञाता । सर्वज्ञः सर्वपालकः ॥
शरीरं शोभते श्रेष्ठं । द्वचिंशत्तस्य लक्षणम् * ॥ छं० ॥ ७४७ ॥ रू० ॥ ३८१ ॥

---

३७६ पाठान्तर-चक्र रचिति । विग्यांनन । जांनन । भानन । मैादन । नृत्य २ । चक्रवनि । चक्रवन । शस्त्र । शास्त्र । सासत्र । युद्धा । तत्वन । युद्ध । तुरंगा । आस । षेटक । उरंगा । जत्रन । महोछव । प्पष्फ । किला । कथा । कैली । श्रायुद्ध । पहेली ॥

३७७ पाठान्तर-तैज । तेय । लष्यन । लषन । वतीस । शीषत । सीषति । आयुध । आउध । रैन ॥

३७८ पाठान्तर-सार । सैाख्यं । समांधीनता । समाधानता । सनमांन । सनमान । सोजन्य । सूरू । चारणं संगीत । संगीत । संयोग । विस्तारयंते ॥

३७९ पाठान्तर--चिप्र । दांच । सवद । दे । सासत्रह ॥

* इन रूपकों के इन चौथे चरणों में नौ अक्षरों को देखकर कुछ आश्चर्य नहीं करना चाहिये क्योंकि संस्कृत भाषा के ग्रंथों में भी ऐसे उदाहरण मिलते हैं जैसे कि दुर्गापाठ के अध्याय २ श्लोक १ में "महिषे सुराणामधिपे" ॥

३८१ पाठान्तर-संस्कृतं । प्राकृतं । अप्रभंसं । अपभ्रंसि । विसाचिका । मांगधी । सूरसेनी ।

काव्यजाति ॥ अरि तर वर तुंगो। कट्टनार्थं कुहारो ॥
कुल कमल प्रकासो। तेज तप्यो दिनेस ॥
दरसन रस सेवी। कामिनी काम मूर्त्ति ॥
पर वर प्रति पंचं। पालनं पार्थवानां ॥ छं० ॥ ७४८ ॥ रू० ॥ ३८२ ॥

अरिल्ल ॥ सूरज ज्यों तप सचु कमोदन। फूलत अंग महा मन मोदन ॥
भूपति भूप प्रतापन भारी। हठ करि रावन ज्यौं अहंकारी ॥
छं० ॥ ७४९ ॥ रू० ॥ ३८३ ॥

स्लोक ॥ ज्ञानधर्मार्थकामं च। वल ग्रचु सिंहासनं ॥
सभारंभक्तितेश्चैवा। भिधानं अष्टधा स्मृतं ॥ छं० ॥ ७५० ॥ रू० ॥ ३८४ ॥

दूहा ॥ पाघ वीराजत सीस पर। जरकस जोति निहाय ॥
मनों मेर के सिषर पर। रह्यौ अहप्पति आय ॥ छं० ॥ ७५१ ॥ रू० ॥ ३८५ ॥
ता पर तुररा सुभंत अति। कहत सोभ कवि नाथ ॥
मनु सूरज के सीस पर। धिषन धर्यौ धनु हाथ ॥ छं० ॥ ७५२ ॥ रू० ॥ ३८६ ॥
श्रवन बिराजत स्वाति सुत। करत न बनै बषान ॥
मनु कमल पच अग्रज रहै। ओस उडगगन आन ॥ छं० ॥ ७५३ ॥ रू० ॥ ३८७ ॥
कंठ माल मोतीन की। सोभत सोभ बिसाल ॥
मेरु सिषर पारस फिरत। जानि नछिचन माल ॥ छं० ॥ ७५४ ॥ रू० ॥ ३८८ ॥
मिस भींने सु मयंक मुष। निपट बिराजत नूर ॥
मनौं बीर उर काम के। उगे आनि अंकूर ॥ छं० ॥ ७५५ ॥ रू० ॥ ३८९ ॥

भाषां। चैव। ग्यायते। विनयं। जनं। ग्याता। सर्व्वज्ञं। पालकं। शरीरे। सरीरे। सोभ्यते। सोभते। श्रेष्टं। दुर्त्रिसमपि लक्षणे ॥

३८२ पाठान्तर-अति। घर तुंगो। कट्टनार्थे। कुठारो। प्रकाशो। तप्तो। दिनैसः। सैवी। मूर्त्ति। पंच। पार्थवाना ॥

३८३ पाठान्तर-सूरिज। सुरज। ज्यैा। ज्यों। शत्रू। फूलति। भुप। ज्यों ॥

३८४ पाठान्तर-ग्यांन। सत्रु। सिंघासनं। तत्ते चैव। अभिधानं ॥

३८५-८९ पाठान्तर-शीस। ज्योति। कै। शिषर। शिषर। परि। अहप्यति। अहपति। तुरा। सोभै मनुं। मनो। सूरिज। मनौं सूरज। कै। शीस षटु। परि। धषन। बिराजित। बषांन। मनो। मनौं। अग्रजु। रहे। ओस। पयोकन। पयोकण। आंनि। शैानत्व। शैाभ। विशाल। सोभति। मेर। शिषर। पास। जनन। छित्रन। मिसि। निपट। मनों। कांम कै। ऊगे। उगै। आनि। अकूर ॥

अरिल्ल ॥ आनन इंदु उदोत सु मानौं। जानन भोज विचष्यन जानौं ॥
रवि ज्यौं सत्रुन के तन तापत। कामिनि कों मकरध्वज मानन ॥
छं० ॥ ७५३ ॥ रू० ॥ ३९० ॥

अरिल्ल ॥ जा सरनागत मानव वंछै। जा सरनागत दानव इंछै ॥
जा सरनागत देव विचरै। सो प्रिथिराज प्रिथीपति सारै ॥
छं० ॥ ७५७ ॥ रू० ॥ ३९१ ॥

दूहा ॥ प्रिथ्थिराज पति प्रिथ्थिपति। सिर मनि कुल्ली छतीस ॥
नष सिष पर मित लस तजै। ते गुन बरनि बतीस ॥ छं० ॥ ७५८ ॥ रू० ३९२ ॥
तिन सहाय असुरह सुभट। सत सामंत रु सूर ॥
तिन सु कित्ति प्रगटी करन। कही चंद कवि पूर ॥ छं० ॥ ७५९ ॥ रू० ॥ ३९३ ॥

कवित्त ॥ चहूआन कै बंस। बीर मानिक्क पुत्त दस ॥
ता सु कित्ति कवि चंद। जनम लग्गै जंपत जस ॥
ज्यौं बीत्या भारथ्थ। आदि अंतह ज्यौं जंपैं ॥
वय वानी सु प्रमान। लग्गन मग्गनह गुन थप्पैं ॥
ज्यौं भयौ जनम कवि चंद कौ। भयौ जनम सामंत सब ॥
इक थान मरन जनमह सु इक। चलह कित्ति ससि लगि रब ॥
छं० ॥ ७६० ॥ रू० ॥ ३९४ ॥

एक दिन रात्रि को चंद की स्त्री का रस में आकर पृथ्वीराज जी की आदि से अंत तक कीर्त्ति वर्णन करने के लिये चंद को कहना ॥

गाथा ॥ समयं इक निसि चंदं। वाम वत्त वदि रस पाई ॥
दिल्ली ईस गुनेयं। कित्ती कहो आदि अंताई ॥ छं० ॥ ७६१ ॥ रू० ॥ ३९५ ॥

---

३१० पाठान्तर-आंनन। इद्व। इंद। उदैात। समानो। मानो। जांनन। जातन। भैाज। बिचष्यन। जानैं। भांन। सत्रुंन। कै। कांमिनी। कुं। मकरधज। मांनन ॥

३९१ पाठान्तर-मांनव। इछै। दांन वंछौः। सरनागति। सो। प्रथीराज। प्रथिपति ॥

३९२ पाठान्तर-प्रिथिराज। प्रिथवीय पति। प्रथीराज प्रथीवी पति। शिर। कुंली। शिष। तजे। तै। छ तीन। छत्रीस ॥

३९३ पाठान्तर-असुरह सुरह। कित ॥

३९४ पाठान्तर-चहुआंनांरै। चहुवाना के। वंश। मांनिक। मानक। स। जन्म लगै। लगें ज्यैा। बित्यैा। भारथ। ज्यैा। जंप्यैा। वांनी। प्रमांन। लगन लगनह। मगनं। थप्यैा। जन्म। जेकैा। सांमंत। थांन। मरेण। जन्म दिन इक। जनंम। कित्त। शसी। ससी। रिव। रवि ॥

पाठान्तर-यांइ। इस। कहों ॥

चंद का अपने घर में कथा कहना और उसकी स्त्री का उसे सुनते हुए जो स्मरण आवे वह पूछते जाना ॥

दूहा ॥ एक दिवस कवि चंद कथ। कही अप्पनें भौन ॥
जिम जिम श्रवनत संभरी। तिम पुछि सारंग नैंन ॥ छं० ७६२ ॥ रू० ॥ ३९६ ॥

चंद की स्त्री का उससे पूछना कि कौन दानव, मानव, और नृप कीर्त्ति करने योग्य हैं।

दूहा ॥ कह्यौ कंत सौं कंति इम। हौं पूछों गुन तोहि ॥
को दानव मानव सु को। को नृप कित्तिक होहि ॥ छं० ॥ ७६३ ॥ रू० ॥ ३९७ ॥

चंद का अपनी स्त्री को गूढ़ उपलक्षों के द्वारा उत्तर दे कहना कि केवल हरि की कीर्त्ति करने योग्य है क्योंकि उसकी भक्ति के बिना मुक्ति नहीं है ॥

कवित्त ॥ पेट काज ऋढि बंस। परें फर हरैं अवनि पर ॥
पेट काज रिन भौन। मरैं मारैं सु ढुरैं धर ॥
पेट काज बहि भार। पार पाहारन पारैं ॥
पेट काज तरु तुंग। चिन्न परि घर पर ढारै ॥
इति पैंट काज पापी पुरुष। बधै बहु लक्छी हरन ॥
नर वर सुकम्म कहा नह करै। इहै उदर दुभर भरन ॥
छं० ॥ ७६४ ॥ रू० ॥ ३९८ ॥

इस रूपक से अंत तक कवि इस आदि पर्व का तो उपसंहार और दशम की कथा का प्रसंग अपनी स्त्री के वार्त्तालाप के द्वारा बड़े गूढ़ार्थ में वर्णन करता है। हम आशा करते हैं कि काव्य के रसिक इस प्रसंग के दोहों और उनके अर्थ के गांभीर्य को अनुभव करके बहुत ही प्रसन्न होंगे ॥

३९६ पाठान्तर–सुदिन। वद। कहीय। अप्पने। भौन। श्रवनंत। श्रवनन। श्ववनह। पूछीय। सारंग। नेन ॥

३९७ पाठान्तर–कंति। सो। सों सो। कंत। इंम। हों। हो। पुछ्यैां। पूछूं। गुन। तोहि को। दांनव। मांनव को। कौं। कैा त्रप। कसि। करहि ॥

३९८ पाठान्तर–काजि। वंस। वंश। परयइं फरअक्कहैं। परइं। फरहरइं। पैठ। काजि। रन। भौमि। मरं। मारे। मरै। मरें। मारें। सुं। ढरे। ढरइं। पैठ। काजि। पाहारम। पेट्ठ। काजि। तरु। चिंत्र। त्तिन। त्रिन। परि। परिय। टारै। इन। इत। काजि। पुरुष। बंधै। वधे। लछी। चर। सुक्रम्म। कह। करहि। इहइ। ईह। भरण ॥

कवित्त ॥ मेह बिना नहि तेह । नेह बिन गेह अरस रस ॥
पिय बिन तिय न उमंग । अंग शृंगार रूप रस ॥
नायक बिन नह सेन । दंत बिन भुक्ति न होई ॥
तेग त्याग तैं रहित । कहै कीरति को लोई ॥
बिन नीर मीन राजत कहूं । कचो बिन सूर त्तरिन ॥
मन बच क्रम्म तिम जानि जिय । न है मुक्ति हरि भक्ति बिन ॥
छं० ॥ ७६५ ॥ रू० ॥ ३९९ ॥

चंद की स्त्री का उसे कहना कि चित्रनेवाले को चित्र कि जिससे तू दुस्तर के पार उतरै-चहुवान की कीर्त्ति कविने से वह क्या रंजैगा॥

दूहा ॥ चित्रनहारे चित्रि तूं । रे चतुरंगी नाह ॥
का चहुआन सु कित्ति कवि । मन मनुक्ख हरि लाह ॥ छं॥ ७६६॥ रू॰ ॥४००॥

कवित्त ॥ तत्त हीन पुत्तरी । पंच बंधी कर नंचै ॥
आसा नदी सपूर । जीय मनोरथ संचै ॥
बहु तरंग त्रिस्नाह । राग बहु ग्रेह कुरंगी ॥
का चहुआना कित्ति । कंत धीरज तिर भंगी ॥
मन मोह म्रढ बिस्तरि रह्यौ । चिंता तट घट भंजइय ॥
उत्तरहि पार दुत्तर कवी । का चहुआना रंजइय ॥
छं० ॥ ७६७ ॥ रू० ॥ ४०१ ॥

चंद का अपनी स्त्री को कहना कि मैं चहुआन का ऋण उतारता हूं ॥

दूहा ॥ कहै गुपत गुन तैं भलै । मो जिय इय अंदेस ।
रिन अप्पौं चहुआन कौ । पुब्बह पिथ्थ नरेस ॥ छं० ॥ ७६८ ॥ रू० ॥ ४०२ ॥

३९९ पाठान्तर-विना । नह । तेहुं । त्रेहु । ग्रेह । गेह । पीउ । त्रिय । तीय । श्रिंगार । सैंन । दत्त । विन । भुंक्ति । होइ । तैग । त्यांग । तै । नन । लोइ । जीवन । नही । सूरं तारिन । सूर तरिन । वच । क्रम । क्रंम । जांनि । जीय । सु न । है । नही मुक्ति हरि भक्ति विनां ॥

४०० पाठान्तर-चित्रनहारै । चं । चहुंवांन । क्रवि । मनुक्ख ॥

४०१ पाठान्तर-तत्र । तत । पुतरी । पूतली । बंधा । नचै । नच्चै । नंदी । संपूर । जीव । मनोरथ । वहां । संचे । बहुंत । रंग । तृश्नाह । बहुं । ग्रेह । कुंरंगी । कां चहुवांन । मोह । मुंढ । चतां । भंजईय । उत्तरिहि । उतरहि । दुतर । कट्टी । कां । चहुवांन । पंजइय । रंजइह ॥

४०२ पाठान्तर-कहै । तै । तें । भलो । भलैं । मौ । ईह अंदेश । रिण । अप्पौ । कौ । पुबह पंथ नरेस । पुछह पित्थि नरेस ॥

चंद की स्त्री का कहना कि राजा को ऋण देता है तो गोविन्द को क्यों नहीं सुमरता ॥

दूहा ॥ चिचनहारे हेरि चित। चिचन हेरि कविंद ॥
जो रिन अप्पै राज कौ। तै सुमरै न गुविंद ॥ छं० ॥ ७६९ ॥ रू० ॥ ४०३ ॥
श्रम जल मन मंदान करि। श्रम जल भेष न फेरि ॥
चित्त न अप्प चिच कौं। चिचनहारे हेरि ॥ छं० ॥ ७७० ॥ रू० ॥ ४०४ ॥

चंद का उत्तर देना कि मैं कमलासन को देखकर अकुलाया हूं, केवल भक्ति विलंब करनेवाली है ॥

दूहा ॥ कमलासन देषत थक्यौ। भगत विलंबन हार ॥
क्रोध अप्प सब जग ग्रसै। ग्रसत न लग्गै वार ॥ छं० ॥ ७७१ ॥ रू० ॥ ४०५ ॥

तथा चंद का कहना कि संसार में जो कुछ और सर्वव्यापी है वह कमलासन ही है उसी की उपमा करके मैं पृथ्वीराज जी की कीर्त्ति वर्णन करता हूं ॥

भुजंगी ॥ वही तत्त चैलोक संसार सारं। वही तारनं सत्त भौ सिंध पारं ॥
जगत्तं अधारं निराधार वोही। वही अव्वदा संपदा नित्य सोही ॥ छं० ॥ ७७२ ॥
वही भेद मंचं गजानंत लोयं। वही पूरनं ब्रह्म संसार भोयं ॥
नवं भत्ति कौं संव ही कच धारी। भम्यौ ब्रह्म बुभ्भयौ वही सिद्ध तारी ॥ ७७३ ॥
जगत्तं सुरत्तं वही हैं निनारं। वहो वासना वासुदेवं प्रकारं ॥
वही भत्त हथ्थं नच्यौ कप्पिमानं। वहीयै वही यै वही यै निधानं ॥ छं० ॥ ७७४ ॥
दूकं एक आचिज्ज कीनें गुसांई। चवै चंद जो रंग गोव्यंद पाई ॥
वही की उपम्मा करै कित्ति भासौं। वही सव्व संसार मझ्झै प्रकासौं ॥ छं० ७७५
वही अंतरंगी सुरंगी निनारं। वहे राज राजीव लोचन्न सारं ॥ छं० ७७६ ॥ रू० ४०६ ॥

४०३-४०४ पाठान्तर-चित्रनहारे चित्र तूं। कवि चंद। ज्यौ अप्पौ। अपैं। को। तो। समरे। समरि। गोविद ॥ ३९८ ॥ मंदा करि। भेष न फोरि। चित्रन अप्पो। अपें। कों। चित्रनहारै ॥
४०५ पाठान्तर-देषत। क्रोध। सर्प्प। ग्रहे। लगो। लगैं ॥
४०६ पाठान्तर-तत। नारणं। भव। सिधु। जगतं। सोही। अंही। अहो। सरदा। सोहो। भेद। मंत्र। गजा मंत। लोयं। पुरनं। सोयं। भोयं। नव। भांति। शव। भ्रम्यो। जगतं। सुरंतं। हेनि। हैनि। वासता। वास। हेवं। वास हेवं। भक्ति। हथं। कप्यिमानं। कपिमानं। नधानं। वही ये वही ये निधानं निधानं। इक। ओक। ओक। अश्चिर्ज। कीनै। कीने। गुसाइ। गुसाई। जो। रंगी। गोविद। उपमा। करे। भासो। कही। सकल। मझै। प्रकासो। कहै। लोवंच ॥

चंद की स्त्री उसे कहती है कि ब्रह्म को ब्रह्म में देख जो उसे देखता है उसे वह दीखता है, नर की कीर्त्ति मत गा क्योंकि उससे और कोई बलवंत नहीं है ॥

दूहा ॥ ब्रह्म देषि ब्रह्मान्तरव । हरि दिषियन दिष्याइ ॥ २ ॥
बिज्ज कटा अग्यांन मन । गोपी हरि गो गाइ ॥ छं० ॥ ७७७ ॥ रू० ॥ ४०७ ॥
ब्रह्म ब्रह्म हरगत बर । नर जानी न गुविंद ॥
सकल घटं घट हरि रमै । ज्यौं अनेक घट चंद ॥ छं० ॥ ७७८ ॥ रू० ॥ ४०८ ॥
जस अपजस लाभिष्ट दोइ । अवगति गति न बुझाइ ॥
गोप ग्वाल बूझे नहीं । गोपन बूझी गाइ ॥ छं० ॥ ७७९ ॥ रू० ॥ ४०९ ॥

कवित्त ॥ कहि मह्यिल बल कित्तौ । एक दहं हरि धारिय ॥
कहि वासिग बल कित्तौ । सु फुनि करि नेचां सारिय ॥
सुमुंद कित्तौ गरुअत्त । अप्प भुज जोर हिलोरिय ॥
कित्तौक सबल मेरु गिरि । कमठ होइ पिट्ठह तोलिय ॥
लघु बली सेस बंभानवै । सुर असुरायन दिट्ठ सह ॥
कवि चंद अवर बल वैम कहि । कह तौ हरि बलवंत कह ॥
छं० ॥ ७८० ॥ रू० ॥ ४१० ॥

चंद का अपनी स्त्री को उत्तर दे कहना कि अंग अंग में हरि रूप रस है ॥

दूहा ॥ त्रिय वर ज्यौ नर ज्यौ सु कवि । नर कित्ती नन गाइ ॥
अंग अंग हरि रूप रस । ब्रम्ह दिषाइ सुनाइ ॥ छं० ॥ ७८१ ॥ रू० ॥ ४११ ॥

---

४०७ पाठान्तर—ब्रह्मांतरवर । हरिपिदिषियंन दिषायं । विज । अग्यांन । गोपी । गौ । पाय ॥
४०८ पाठान्तर—ब्रंह्म ब्रंह्म । जांनी । गोविंद । घटमै । ज्यो । मै रामचंद ॥
४०९ पाठान्तर—लाभिष्टकी । बुझाय । ग्योप । बुझो । बुझै । गोपन । बुझी । गाय ॥
४१० पाठान्तर—दठह । धारीय । कितै । किनौ । फुंनि । सारीय । सारी । समुंद । किसौ । गुरु वत्त । गुरुवत्त । अप्प व । भूज । जौर । हिलोरीय । कितक । मेरु । मेर । गिर । होइ । पिठह । तोलिय । शेस । असुराईन । दिठ । कहै । त । बलिवंत । कहि ॥
४११ पाठान्तर—त्वीय । सुं किती लाई । गाय । ब्रवि । दिषाई । दिषाय । सुंनाई । सुनाय ॥